

ग्राम्य अर्थ-शास्त्र

(युक्तप्रान्त के हाईस्कूल और इंटरमीडियेट बोर्ड की
हाईस्कूल पराक्षा के ग्राम्य अर्थशास्त्र के
लिये रीसृत)

— ❀ —

लेखक

पंडित दयाशकर दुवे, एम० ए०, एल-एल बी०
अर्थशास्त्र अध्यापक, प्रयाग विन्निविद्यालय
और

श्री शंकरसहाय समितीना एम० ए०, बी० काम
प्रिंसिपल, महाराणा कालेज, उदयपुर

प्रकाशक

नेशनल प्रेस

दिल्ली

१९४८

Printed by
RAMZAN ALI SHAH at the National Press,
Allahabad
7m—948

भूमिका

म उन व्यक्तियों में से हूँ जो अर्थशास्त्र के ज्ञान का प्रचार छोटे दूरों के विद्यार्थियों में भी चाहते हैं। इसलिये मैंने अर्थशास्त्र सम्बन्धी कई विषयों पर पाठ अपनी 'बालबाच' पुस्तक में दिये। यह पुस्तक चार भागों में प्रकाशित हुई और कई वर्षों तक सुदूरप्रान्त व प्रारम्भिक पाठशालाओं के लिये पाठ्यग्रन्थ के रूप में स्वीकृत रही। मुझे यह सूचित करते हुए होता है कि इस पुस्तक के अर्थशास्त्र-सम्बन्धी पाठों का अद्ययावत और विद्यार्थियों ने बहुत पसन्द किया। इसमें यह भी प्रसिद्ध हो गया कि अर्थशास्त्र ऐसा सरल विषय है, जिसका ज्ञान छोटे बच्चों को भी प्रारम्भिक पाठशालाओं में आसानी से कराया जा सकता है।

अर्थशास्त्र का विषय सरल और महत्वपूर्ण होने पर भी उसे प्रारम्भिक पाठशालाओं के पाठ्यग्रन्थों में अभी तक स्थान नहीं मिला। सन् १९१७ तक तो, जिस वर्ष मैंने बी० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की, अर्थशास्त्र का बी० ए० से नाचे दर्जे की परीक्षा के पाठ्य विषयों में स्थान नहीं दिया गया था। उन दिनों अर्थशास्त्र के विषय का पढ़ना बी० ए० क्लाम से ही आरम्भ होता था। इटरमीडियट तक पढ़ने वालों को तो इस विषय के ज्ञान प्राप्त करने का अवसर ही नहीं मिलता था। कुछ वर्ष बाद अर्थशास्त्र को इटरमीडियट के पाठ्य विषयों की सूची में स्थान मिला और सन् १९४० से ग्राम्य अर्थशास्त्र का सुदूरप्रान्त की हाईस्कूल परीक्षा के पाठ्य विषयों की सूची में भी स्थान मिल गया है। इस ग्राम्य अर्थशास्त्र के पाठ्य क्रम के अनुसार **द्वि** पुस्तक तैयार की गई है। पुस्तक का तृतीय संस्करण इसी वर्ष में

प्रस्तुत चतुर्थ संस्करण इसकी उपरोक्ता तथा प्रचार का द्योतक है। इसमें यथोचित सुधार तथा सशाधन किया गया है।

इसमें जमींदारी प्रथा की बुराइयों को रोकने तथा अत में उमका अत कर देने के लिए सरकार की नो योजनाएँ हैं उनका यथा स्थान उल्लेख कर दिया गया है। महजारी भूमि सन्धि आयायों में भी उचित सुधार किया गया है।

महाराणा मालेन उदयपुर के प्रिंसिपल श्रीशंकर महाय जी सक्मेना के सहयोग से यह पुस्तक तैयार की गई है। हम लोग आशा करते हैं कि इस पुस्तक से हाइस्कूल व बगार्थियों का प्राय्य आर्यशास्त्र का विषय समझने में पहले से अधिक सहायता मिलेगी।

इस पुस्तक के लिखने में मुझे श्री महेशचन्द्र अग्रवाल एम० ए० वी० एस० सी० आनस 'विद्यार्थ' लेखकर, प्रयाग विश्वविद्यालय, से जो सहायता मिली है उसके लिये मैं उनका कृतज्ञ हूँ।

यदि कोई सज्जन इस पुस्तक की भटियों की तरफ मेरा ध्यान आकर्षित करेगा या इसको और अधिक उपयोगी बनाने के उपाय बतलावे तो मैं उनका बहुत आभारी होऊंगा।

श्री दुबे निवास
दारागज (प्रयाग)
१५ सितम्बर १९४८

} दयाशंकर दुबे
अर्यशास्त्र अध्यापक
प्रयाग विश्वविद्यालय

विषय-सूची

पहला अध्याय

अर्थशास्त्र क विभाग

मनुष्य की आवश्यकतायें—प्रकृति देने वाला है—अर्थ शास्त्र—अर्थ शास्त्र के विभाग- अर्थशास्त्र क्या है?—उत्पत्ति—उपभोग—विनिमय—वितरण—सारांश—अर्थ शास्त्र के अर्थ पत्र से लाभ—अभ्यास के प्रश्न १—१३

दूसरा अध्याय

परिभाषाएँ

धन या संपत्ति—केवल रुपया पैसा ही धन नहीं—सम्पत्ति-वृद्धि—सम्पत्ति और सुख—उपयोगिता—सीमांत उपयोगिता—मूल्य—कीमत—आय—अभ्यास के प्रश्न १४—२८

तीसरा अध्याय

उत्पत्ति

उपयोगितावृद्धि—भूमि—श्रम—श्रम की उपयोगिता—श्रम विभाग—पूँजा—प्रबंध—माहस या जोखिम—अभ्यास के प्रश्न २४—३६

चौथा अध्याय

खेती

भारतीय गोंदा की खास पैदावारें—भारतीय भूमि की पैदावार की कमी—पैदावार की कमी के कारण—नेता का छोटे छोटे और दूर दूर हाना—खेती में क्या करना पड़ता है?—ग्रामीण उद्योग धंधे—अभ्यास के प्रश्न ३७—४७

पाँचवाँ अध्याय

घरलू उद्योग धंधे

घरलू उद्योग धंधे की आवश्यकता—कुछ हिन्दोस्तानी उद्योग धंधे—वरतन बना—चटाई और टोन्नी बनाना—गुड़ बनाना—चूर्ण काटना

श्रीर कपड़ा बुनना—पशु पालन—दूध का काम—मकगन और घी—रस्सी बनाना—लकड़ी का काम—लोहार का काम—तेली का काम—जूते बनाना—फल, फूल और तरकारी पैदा करना—शरद का धधा—अय उद्योग ध धे—घरेलू उद्योग धधे और सरकार—अभ्यास के प्रश्न— ६८—६९

छठवाँ अध्याय

आवश्यकतायें

आवश्यकता का महत्व—आवश्यकता और इच्छा—आवश्यकता और उद्योग—आवश्यकता के लक्षण—आवश्यकता के भेद—आवश्यकता की पूर्ति—आय-व्यय—वचन—अभ्यास के प्रश्न— ७०—७४

सातवाँ अध्याय

भारतीय रहन सहन का दर्जा

रहना-गहना का दर्जा—भारतीय रहन सहन का दर्जा—रहन गहन का दर्जा ऊँचा करने का उपाय—पारिवारिक बचत—खिमान का रतच—गाँव के मनदूर और उतारा रतच—गाँव के कारीगर का व्यय—अभ्यास के प्रश्न— ७५—७९

आठवाँ अध्याय

भाजन खाना और कैसा हो ?

भाजन की आवश्यकता—चर्बी, प्राटीन, चीनी, और विटामिन—भाजन के भेद—उपयुक्त मात्रा का माप—अभ्यास के प्रश्न— ८३—८८

नयाँ अध्याय

विनिमय

बन्धुओं की अदला बधली—मान की ग्राह और बिक्री—बाजार—बाजार का क्षेत्र—बन्धु का कीमत किस प्रकार निश्चय होती है—नेता से उत्तम पदार्थों की कीमत—अभ्यास के प्रश्न— ८८—९६

दसवाँ अध्याय

ग्रामीण फमल की बिक्री

प्रकथन—बिक्री की बातें—मंडी में फमल की बिक्री—गाँव में बना
वस्तुओं की बिक्री—ग्रामीण मर्दान—महसारी मस्यायें और बिक्री—ग्रामीण
वात्सार—हाट—गाँव का मेला—हाट और मेले का महत्व—हाट और बेल
का संगठन—अभ्यास के प्रश्न—

१००—१०६

ग्यारहवाँ अध्याय

वितरण

वितरण क्या है?—खेती में वितरण—लगान—मजदूरी—गूद—
मुनाफा—अभ्यास के प्रश्न—

१०६—११६

बारहवाँ अध्याय

बटाई प्रथा

विषय प्रवेश—बटाई प्रथा क्या है?—बटाई की दर—बटाई प्रथा के कुछ
दोष—मजदूरी सम्बन्धी बटाई—बटाई और राति-रिवाज—अभ्यास के
प्रश्न—

११६—१२७

तेरहवाँ अध्याय

जमींदार और किसान

स्थायी बन्दोबस्त—बगात का फगाठट रमीशन—अस्थायी बन्दोबस्त—
जमींदार और किसान—पगार और नगराना—जमींदार के कर्तव्य—पट्टपारी
के फागनात—शुनरा मिलान—खसरा—स्थावा—बढीजाता विसवार—
खतौनी—खेपट—पट्टपारी के अर्थ कार्य—अभ्यास के प्रश्न—

१२७—१३०

चौदहवाँ अध्याय

ग्रामों की समस्याओं का दिग्दर्शन

पन्द्रहवाँ अध्याय

किसानों का निरपशावादी ऋष्टिकोण

निरपशावादी दृष्टिकोण—अभ्यास के प्रश्न—

१४२—१६२

सोलहवाँ अध्याय

गाँव की सफाई

ताल व पाखरे—छाद के गड़े—शौचम्यान—नाबदान तथा नालियाँ की समस्या—परा में हवा और रोशनी का प्रबंध—गाँव की सड़कें—गाँव में कुशल दाइयाँ की समस्या—गाँव में सफाई और स्वास्थ्य रक्षा की योजना—अभ्यास के प्रश्न—

१४६—१६७

सत्रहवाँ अध्याय

ग्रामाण शिक्षा

ग्रामाण शिक्षा—मार्नेट रिपोज—तालीमा सप—अभ्यास के प्रश्न—

१६७—१६९

अठारहवाँ अध्याय

संसारजन के साधने

गाँवों का खेल—दृष्टान्तों का खेल—गाँव का स्काउट द्रुप—भजन तथा ब्रजम सटावर्षी—नाटक तथा प्रदर्शन—रहिया—भक्ति लेखन तथा गीतों का—ग्राम सेवादल—परा का अधर आधर बनाना—अभ्यास के प्रश्न

१७१—१७७

उन्नीसवाँ अध्याय

पीसर्वा अध्याय

पशु पालन

गर्भ में गाय और बैल का महत्व—गौ-वश की अत्यन्त हीन दशा—गौ-वश की हीन दशा र राग्य आवश्यकता से अधिक बैल—बारे की रमी—साईलेज बनाने का उपाय—पशुओं के रोग—गाय और बैलों की नस्ल-विज्ञान बोट द्वारा सहायता—सहकारी नस्ल-मुधार समितिर्षा—ग्राम मुधार विभाग—गऊशाला—गौ सेवा सघ—अभ्यास के प्रश्न— १८१—१८३

इपकीसर्वा अध्याय

गैनों की उन्नति के उपाय

रूपि की गिरी हुई दशा—रूपि के आवश्यक साधन—मूनि—पूँजी—अम तथा सगठन—छाटे छाट विचार हुए पत्तों की समस्या—साद की समस्या—हड्डी की म्याद—हरी साद—अब प्रश्न की म्याद—फल्लों का देर फेर—पशुधन—रोता के धन—वान—सिचाइ—कपा का जन—मुआ के द्वारा सिचाइ—सयुक्त प्रांत में ट्यूब वेल—गहर के द्वारा सिचाइ—तालाब—साय—अम और सगठन—फल्लों के धन—रोती का पैदावार बचने की समस्या—गाँवों की सड़क—मटिया का पुनर्संगठन—विज्ञान को सतर्क तथा परिश्रमी होना चाहिए—अभ्यास के प्रश्न— १८३—०१६

यादसर्वा अध्याय

मुफ्तमेवागी

मुफ्तमेवागी—आभयन रह—संगठित गाँव पंचायत—अभ्यास के प्रश्न— ०१६—०१६

तेहसर्वा अध्याय

ग्रामवासियों को श्रृणुमुक्त करना

ग्रामवासियों का श्रृणुमुक्त करना—महायुद्ध और श्रृणु—कर्तार होने के कारण—अनिश्चित रोती—बैला का मूल्य—सामाजिक तथा धार्मिक कृत्यों में अधिक व्यय करना—मुफ्तमेवागी—लगान और मालगुजारी—सरकार द्वारा श्रृणु की समस्या का हल करने का प्रयत्न—श्रृणु परिशोध—

महाजन लायसेंस कानून—अभ्यास के प्रश्न—परिशिष्ट—ग्रामीण धंधे—ग्राम
उद्योग सघ—गाँवों में आने जाने की अनुविधा—अभ्यास के प्रश्न—
२२०—२३३

चौथीसवाँ अध्याय

कृषि-विभाग के कार्य
कृषि विभाग का संगठन और उसका कार्य अभ्यास के प्रश्न—
२३३—२३८

पच्चीसवाँ अध्याय

ग्राम और जिला का शासन
ग्राम शासन; ग्राम के मुख्य कर्मचारी—मुनिषा—पञ्चवारी—चीकीदार
—तहसीलदार—तैदाती वार्ड और जिला समिति—निवाचक और सदस्य—
जिला बोर्ड के कार्य—जिला वार्डों की शाय—सरकारी नियंत्रण—नागरिक
भावों की आवश्यकता—जिले का शासन—शासन व्यवस्था में जिले का
स्थान—जिला मजिस्ट्रेट के कार्य—जिले का अन्य कर्मचारी—वमिश्नर—
अभ्यास के प्रश्न—
२३८—२६६

छत्तीसवाँ अध्याय

गाँव पाला का पारम्परिक सम्बन्ध
ग्रामादार और रिमानों का सम्बन्ध—महाजन और डिमा—गाँव वाला
का पारम्परिक सम्बन्ध—गाँवों की मजदूरी और उदाहरण महत्त्व—पंचायतों—
पंचायतों की स्थापना—अनुष्ठान में पंचायत—पंचायतों का कार्य करने
का ढंग—पंचायत की संरचना का उदाहरण—अनुष्ठान का पंचायत राज्य
प्रकार—गाँव समा—गाँव पंचायत का कार्य—हर—पंचायत अदालत—
अभ्यास के प्रश्न—

सत्ताईसवाँ अध्याय

कार्य—समितियों का पूर्णता—समितियों के कार्यालयों का अक्षय होना—
 समितियों का वित्तनिर्वाह करना—समितियों द्वारा श्रम देने का कार्य—
 समितियों का आनन्दनिरासण—कृषि सहकारी साम्य समितियों की
 भिन्नता हुई सुविधाये—न्याय कृषि साम्य समितियों सम्बन्ध हा रही है ?
 अभ्यास के प्रश्न— २५७—२६६

अष्टादशवाँ अध्याय

गैर-सहकारी कृषि सहकारी समितियाँ

सहकारी ऋण विभाग समितियाँ—ऋण समितियाँ—विक्रय समितियाँ—
 विक्रय समितियों का संगठन—भूमि की चकबंदी करने वाली समितियाँ—
 चकबंदी समिति की स्थापना—रहन-सहन पुधार समितियाँ—उपभोक्ता
 सहकारी स्टोर्स—सहकारी स्टोर्स के मुख्य नियम—भारतवर्ष में उपभोक्ता
 स्टोर्स—मद्रास में स्टोर्स की असफलता के मुख्य कारण—मद्रास का ट्रिपली
 वेन स्टोर—महायुद्ध और स्टोर्स—अभ्यास के प्रश्न— २६६ २६८

उन्तीसवाँ अध्याय

सहकारी समितियों के यूनियन

गाण्ठी यूनियन—मुपरवाइजिंग यूनियन—प्रान्तीय सहकारी यूनियन
 — अभ्यास के प्रश्न— २६८—२६९

तीसवाँ अध्याय

सैन्ट्रल सहकारी बैंक

साधारण, समा -वार्ड आर डायरेक्टर्स—कायशीन पूर्णता—अभ्यास
 के प्रश्न— २६९—२७०

इकतीसवाँ अध्याय

प्रान्तीय सहकारी बैंक

प्रान्तीय सहकारी बैंक—अभ्यास के प्रश्न २७०—२७०

बत्तीसवाँ अध्याय

उद्धारिता आन्दोलन की दशा

२७०—२७०

CLASSIFIED CONTENTS

(According to the Syllabus of Rural Economics and Co-operation for the High School Examination of 1949 and subsequent year prescribed by the Board of High School and Intermediate Education, U P)

विषय सूची, स्वीकृत पाठ्यक्रम के अनुसार

Introduction (विषय प्रवेश १-२३)

Subject-matter of Economics (अर्थशास्त्र का विषय)	१-२३
Wealth (धन वा संपत्ति)	२४-२६
Wealth and prosperity (समृद्धि और सुख संपृद्धि)	२६-२८
Utility (उपयोगिता)	२८-३०
Value (मूल्य)	२०-२१
Price (कीमत)	२१-३०
Income (आय)	३

Production (उत्पादन) ४४-६१

Essentials of Production (उत्पादन के आवश्यक अंग)	३१-३२
----------------------------------------------------	-------

Their nature and function in agriculture and handicraft industries (उद्योग और उद्योग शैली और परंपरा उद्योग शैली में कार्य)

A survey of the principal crops of any locality (किसी स्थान के मुख्य फसलों का पता)	३३-३४
--------------------------------------------------------------------------------------	-------

Low yield of the land and its causes (भूमि की कम उपज और उसके कारण)

Sub-division and fragmentation of holdings (भू-खंडन और भू-खंडन)	३५-३६
-------------------------------------------------------------------	-------

Important Cotton Industry Products (महत्वपूर्ण कपास उद्योग के उत्पाद)

...	३६-३७
-----	-------

Rope making (रसा बनाना)	२५
Cotton-spinning and weaving (चला मतना और कपड़ा बुनना)	५१-५२
Tanning and shoe-making (चमड़ा रमाना और जूते बनाना)	५८-५८
Wood work (लकड़ी का काम)	५६
Ghee and milk-production (घी और दूध नाम)	२२-२४
Methods of agriculture, equipment, agricultural technique and rural industries (खेती के तरीके खेता का विशेषताएँ और ग्रामीण उद्योग घरे)	४१-६०
Consumption (उपयोग)	५८-६०
Wants, Income, Satisfaction of wants (आवश्यकताएँ, आय, आवश्यकताओं का पूर्ति)	६२-७३
Classification of wants (आवश्यकताओं का वर्गीकरण)	६६-६६
Savings (बचत)	७०-७३
Budgets of consumption of farmer, village artisan and village labourer (किसान, ग्रामीण शरीर और ग्रामीण मजदूर का बजट)	७७-८२
Standard of living (रहन सहन का दर्जा)	७४-७६
Essentials of a balanced diet (उपयुक्त भोजन की आवश्यक वस्तुएँ)	८३-८७
Exchange (विनिमय)	८८-१०८
Barter (वस्तुओं की बदला बदली)	८८-८९
Purchase and sale (वस्तुओं की खरीद और बिक्री)	८९-९१
Market and extent of a Market (बाजार और बाजार का क्षेत्र)	९१-९३
Determination of price in the existing rural condition (बाजार में वस्तुओं के मूल्य का निर्धारण)	९३-९८

Marketing of agricultural produce and disposal of village handicrafts (ग्रामीण फसल और घरेलू उद्योग-घरों के पदार्थों की बिक्री) १०० १०८

Its draw-backs and improvements (उसके दाप और उसकी उन्नति) १०२ १०६

Village markets, *hats* and fairs (ग्रामीण बाजार, हाट और मेले) १०४ १०८

Their utility and organisation (उनकी उपयोगिता और संगठन) १०७ १०८

Distribution (वितरण) ११० १३८

Sharing of agricultural income (कैतों की आय का वितरण) ११० १११

Rent (सगात) १११ ११३

Interest (सुद) ११२ ११६

Wages (मातूरी) ११३ ११६

Profit (मुनाफा) ११६ ११८

Barter system and abuses of *batai* (बगार प्रथा और उसका दुस्प्रयोग) ११६ ११८

System of payments to village workers (ग्रामीण काम करने वालों की मातूरी चुकाने का तरीका) ११८ ११९

Customs and traditions and their effects on economic condition (रास्ति रिवाज का आर्थिक दशाशा पर प्रभाव) ११९ १२२

Land tenure (मानसुजारी प्रथा) ११७ १२०

Relation between zamindar and tenants (जमींदार और किसान का सम्बन्ध) १२० १२८

Patwari papers (पटवारी के कागजात) १२४ १२७

Village Economy (ग्रामीण समस्याएँ) १२८ १६

Village problems (ग्रामीण की समस्याएँ) १२८ १८०

Sanitation (सफाई) १८६ १८६

Education (शिक्षा)	१५७ १६८
Recreation (मनोरंजन)	१६५ १७०
Personal hygiene and its principles (स्वास्थ्य-रक्षा और उमर सिद्धान्त)	१७० १८१
Cattle problems (पशु पालन)	१८१ १९३
Agricultural and cattle improvements (नैती और पशुओं की उन्नति)	१८३ २१५
Disputes (मुद्दमेवानी)	२१६ २१९
Indebtedness and its causes and remedies (ग्रामीण ऋज, उमर मारण और उमरे कम करने के उपाय)	२२० २३०
Village and district administration (ग्राम और जिले का शासन)	२३८ २४९
Relation of the village people between them- selves (गाँव वालों का पारस्परिक संबंध)	२४२ २५६
With the administrative officers (गाँव वालों का सहायक अधिकारियों से संबंध)	२३८ २४२
Associations and their importance in rural areas (गाँव की संघों और उनका महत्व)	२४९
Panchayats and their functions (पंचायतें और उनका कार्य)	२४९-२६६
<i>Co operation</i> (सहकारिता)	२६७-३००
Co operative Credit Societies (सहायक साप्य समितियाँ)	२६८ २५९
Primary Agricultural Credit Co-operative Societies, their organisation and working and effects in India (प्रारम्भिक कृषि सहायक साप्य समितियाँ, उनकी व्यवस्था और कार्य)	२६९ २६९

Agricultural and Non-credit Societies (गैर साख्त इपि सहकारी समितियाँ)	२६६-२८७
Co-operative Sale and Purchase Societies (सहकारी क्रय-विक्रय समितियाँ)	२७१ २७६
Co operative Better Living Societies (रहन सहन मुधार समितियाँ)	२७६-२८१
Consumers Co operative Stores (उपभोक्ता सहकारी स्टोर्स)	२८१ २८७
Union of Co operative Societies (सहकारी समितिया के यूनियन)	२८६ २९२
District or Central Banks (जिला या सेंट्रल सहकारी बैंक)	२९० २९६
Provincial Co operative Banks (प्रांतीय सहकारी बैंक)	२९७ ३००
सहकारिता आ-दालन की दशा	३०० ३०२



ग्राम्य अर्थ-शास्त्र

पहला अध्याय

अर्थ-शास्त्र के विभाग

मनुष्य की आवश्यकताएँ (Human wants)

मनुष्य की—दुमरे जीवधारियों की तरह हा कुछ आवश्यकताएँ (wants) होती हैं जिन्हें पूरा किये बिना वह जीवित हा नहीं रह सकता। उसको खाने के लिए भोजन, पाने के लिये पानी, साम लेन क लिए हवा, शरीर रक्षा करने के लिए मकान और कपड़ा चादिये नहीं ता। उनका जीवित रहना फठिन हो जाएगा। यह ऐसी अनिवार्य आवश्यकताएँ (Necessary wants) हैं जिनको पूरा किये बिना मनुष्य जीवित हा नहीं रह सकता। इनकी मुख्य आवश्यकताएँ (Primary wants) भी कहते हैं।

परन्तु पशु और मनुष्य में यहा भेद है कि पशु इन अनिवार्य आवश्यकताओं (Necessary wants) का पूरा करन के उपरान्त और कुछ नहीं चाहते। किन्तु मनुष्य केवल इन आवश्यकताओं को ही पूरा करके रुक नहीं जाता। वहाँ यह अनिवार्य आवश्यकताएँ पूरी हुई कि मनुष्य को और नई आवश्यकताएँ अनुभव होने लगती हैं और वह उनका पूरा करने की चिन्ता में लग जाता है। उदाहरण के लिए मनुष्य का कुछ भोजन जीवित रहन के लिए आवश्यक है परन्तु जब मनुष्य भोजन करता है तो वह बढिया बढिया मिष्ठान और अच्छे भोजन की इच्छा रखता है। केवल रुखा सूखा भोजन ही उसकी तृप्त नहीं करता। इसी प्रकार कुछ कपड़ा शरीर का रक्षा के लिए नितान्त आवश्यक है परन्तु मनुष्य केवल अपना ता ही नहीं ढकता वह बढिया-बढिया डिजाइन क पैशनेबिल वस्तु मा चाहता है। कहने का मतलब यह कि मनुष्य की आवश्यकताएँ असीमित हैं। उनकी कोई सीमा नहीं है।

प्रकृति (Nature) देने वाली है

मनुष्य की आवश्यकताओं का पूरा करने के लिए जिन वस्तुओं की जरूरत होती है वे हमें प्रकृति से मिलती हैं। किन्तु प्रकृति कुछ वस्तुओं को इतनी उदारता से हमें देती है कि उनके लिए मनुष्य को कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता। उदाहरण के लिए हवा, धूल और पानी हमें इतना अधिक राशि में मिलती है कि उसमें लिए हमें कोई कोशिश नहीं करनी पड़ती। परन्तु अन्य वस्तुओं को यद्यपि हम प्रकृति से हासिल करते हैं परन्तु उनमें नियम हमें प्रयत्न करना पड़ता है। बिना प्रयत्न किये प्रकृति हमें उनको नहीं देगी। इसी लिए हम देखते हैं कि मनुष्य बग़ैर अपनी आवश्यकताओं का पूरा करने के लिये प्रयत्न करता रहता है। उसका आवश्यकताओं का काम करना नहीं होता है। इस कारण वह लगातार प्रयत्न करता रहता है और अपनी आवश्यकताओं को पूरा करता है।

यही कारण है कि हम प्रत्येक मनुष्य को कुछ न कुछ ऐसा काम करते देखते हैं कि जिससे वह अपना और अपने परिवार का पालन पोषण कर सके। कोई डाक्टर है तो कोई यकीन, कोई गृह का काम करता है तो कोई मिट्टी के बतन बनाता है।

मनुष्य जिन वस्तुओं का उपयोग करता है उनको उत्पन्न कर वह उन वस्तुओं को लेता है जिनकी उन आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए कुम्हार किसान से गहूँ लेकर अपने मिट्टी के बतन देता है इत्यादि।

अर्थशास्त्र (Economics)

1) अब अर्थशास्त्र क्या है इसको हम समझ सकते हैं। अर्थशास्त्र वह शास्त्र है जिसमें हम मनुष्य के उन प्रयत्नों का अध्ययन करते हैं जो वह अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए करता है।

यदि कोई मनुष्य अधिक प्रयत्न करता है तो वह अपना बहुत सी आवश्यकताओं (wants) को पूरा कर लेता है और यदि वह थोड़ा ही प्रयत्न करता है तो उसकी कम आवश्यकताएँ ही पूरी हो सकेंगी। दूसरे शब्दों में पहला आदमी अमार हाथ और दूसरा ग्रास होगा। यहाँ ठीक एक दश की होती है अगर किसी देश के लोग अधिक प्रयत्न करने प्रकृति से बहुत सी वस्तुएँ प्राप्त नहीं करते तो वह देश निरबल रहेगा। अर्थशास्त्र में मनुष्य के

इन प्रयत्नों का ही अध्ययन किया जाता है। इसलिए अर्थशास्त्र के अध्ययन से हमें यह भी मालूम हो सकता है कि हम निधन क्यों हैं और किस प्रकार घना बन सकते हैं।

सही म हम कह सकते हैं कि "अर्थशास्त्र यह शास्त्र है जिसमें हम मनुष्य के अपने पानन-पोषण के लिए किये गये प्रयत्नों का अध्ययन करते हैं।

अर्थशास्त्र के विभाग

यह ता हम पहले ही कह चुके हैं कि मनुष्य अपने और अपने परिवार वालों के भरण पोषण के लिए जो प्रयत्न करता है उनका अर्थशास्त्र में अध्ययन किया जाता है। यह प्रयत्न चार विभागों में बाँटा जा सकता है—

(१) धन (wealth) की उत्पत्ति करना (Production), २ धन का उपभोग करना। (किसी चीज का खर्च करना) (Consumption), ३ विनिमय (Exchange) अर्थात् किसी वस्तु का मोल लेना, ४ वितरण (Distribution) अर्थात् उत्पत्ति का वंटारा करना।

उदाहरण के लिए विद्यार्थियों में से ऐसे बहुत से होंगे जिनके पिताजी नौकरा करते, बकायत या डाक्टरी में धन उत्पन्न करते हैं।

अर्थ-शास्त्र (Economics) क्या है ?

क्या कभी तुमने यह भी सोचा है कि तुम्हारे पिताजी इन पैसे को कैसे पैदा करते हैं और इनको कैसे खर्च करना चाहिए ? क्या यह अच्छा होगा कि तुम्हारे पिताजी, तनकाह पाते ही सब रुपये को खर्च कर दें ? नहीं, क्योंकि ऐसा करने से महीने भर का खर्च कैसे चलेगा ? क्या तुम्हारे पिताजी सब चीजें मुफ्त में ही बाँट देते हैं ? क्या वे रुपये के बदले में कुछ नहीं लेते ? जब तुम मही में अनान खरीदने जाते हो ता रुपये के बदले में गेहूँ, चना, मटर, चावल आदि चाजे खरीदते हो। तुम लोगों में से बहुत में गाँजा के रहने वाले हैं। वहाँ किसान खेती करके अनान की उत्पत्ति करते हैं। जब पसल कट कर खलिहान में आ जाता है तो उसका थोड़ा सा हिस्सा तो खाने के लिए पर में रखा लिया जाता है और एक मुठ्त बड़ा हिस्सा व्यापारी के हाथ में दिया जाता है लेकिन एक बात और है। इन सब के पहले खलिहान पर—नाऊ धोनी, मालगुनार, महाजन आदि का धावा होता है। शहर की तरह गाँवों में

गाक, घोबी, बटई वगैरह को नकद पैसा तो मिलता नहीं। घर पीछे उनका हिस्सा बँधा रहता है। फसल कट जाने पर अनाज में से पहले उनका हिस्सा निकाल देना पड़ता है। महाजन जिनसे किसान रुपया उधार लेते हैं छूट की जगह अनाज ही ले लेते हैं।

ऊपर दिये हुए उदाहरण से यह साफ हो जाता है कि हर एक मनुष्य जो अपने भरण-पोषण के लिए प्रयत्न करता है अर्थात् कोई घधा या पेशा करता है उसको सन से पहले घन पैदा करना पड़ता है फिर वह उसके बदले उन चाज़ों को मोल लेता है जिनकी उसको आवश्यकता है फिर वह उनका उपभोग करता है अर्थात् काम में लाता है या खर्च करता है और यदि उसने कुछ और लोगों की मदद से घन की उत्पत्ति की है तो उनका हिस्सा बाँटना पड़ता है। साराश यह है कि अर्थशास्त्र के अध्ययन के लिए हमें उसको चार विभागों में बाँट लेना चाहिए—

- १ उत्पत्ति (Production)
- २ उपभोग (Consumption)
- ३ विनिमय (Exchange)
- ४ वितरण (Distribution)

अब हम आगे इन चार विभागों के सम्बन्ध में विचार करेंगे।

उत्पत्ति (Production)

हम ऊपर कह आए हैं अर्थशास्त्र हमें उत्पात्त के बारे में बहुत कुछ बतलाता है, पर यह उत्पत्ति है क्या बना ? क्या केवल किसान ही का सम्बन्ध उत्पात्ति से है ? नहीं, दर्जी, जुलाहा, बटई, हलवाई, सबके सब उत्पात्ति कार्य करते हैं। जुलाहा क्या करता है ? वह रुई के रेशों को इस प्रकार मिलाता है कि कपड़ा तैयार हो जाता है। दर्जी उस कपड़े को क्या करता है ? वह आपके बदन का नाप लेकर उस कपड़े को काट छुँट कर इस प्रकार से सा देता है कि उसका बनवाई हुई कमीज व कोट आपके बदन पर ठीक फिट कर जाती है। इसी प्रकार हलवाई मैदा, खोवा, चीनी वगैरह को इस प्रकार मिला कर आग पर भून कर तैयार करता है कि मिठाई बन जाती है। बटई लकड़ी और कुछ वीलों को इस प्रकार मिला देता है कि हमारा

दल, घाट, कुर्सी या मेज बन जाती है। कुम्हार गीली मिट्टी को चारु पर इस प्रकार से सँवारता है कि सफेरा, कड़व हाँडी तैयार हो जाती है। किसान को ही ले लो। यह घोड़े से बीजों से मनो अनाज पैदा करता है। परन्तु कैसे ? यह बीज को एक ग्वास दग से खेत में रगता है। फिर इस प्रकार से खाद व पानी डालता है कि बीज उनके तथा हवा के अशुओं को लेकर अपना घेप बदल डालता है। उसमें से एक छोटा सा पौधा फूट निकलता है और यह पौधा अन्त में अन्न के सैकड़ों दाने पैदा करता है। कटने का मननन यह है कि कोई भी अपनी ओर से कुछ नहीं जोड़ता। किसान से लेकर, जुताई और दूर्जों तक सब के सब पहिले से प्राप्त किसी वस्तु को इस प्रकार से रक्खते हैं कि उस वस्तु की उपयोगिता बढ जाती है। जहाँ पहले न्द हमारे बहुत कम काम की रहती है, वहाँ रुई की कमीज या कोट को इस अपनी बदन टकने में उपयोग करते हैं। इसलिए किसी वस्तु की उत्पत्ति से हमारा मतलब होता है उसे और उपयोगी बनाना।

मान लीजिए आपने खेत के छोर पर आपका एक पुराना सूत्रा पेड़ खड़ा है। आप उसे रेंचना चाहते हैं और श्याम आपको बीस रुपए देने को तैयार है। आपको दाम कम जँचता है और आप स्वयं पेड़ काट कर उसके तरने बना डालते हैं। इन तरनों को आप तीस पैंतीस रुपए में बँच सकते हैं। पर यदि आप इन तरनों से चौलट, कुर्सी, चारपाई आदि बना डालिये तो आपको पचास रुपए भी मिल जाएँ तो कोई आश्चय नहीं। लेकिन आपने इतने समय तक किया क्या ? उस पेड़ की लकड़ी का ठो बड़ा ही नहीं दी। उल्टा आप उसे काटते छोटते रहे। हाँ, आपने उस लकड़ी की उपयोगिता अवश्य बढा दी। यहाँ पर किंसा प्रकृति से प्राप्त की हुई वस्तु की उपयोगिता बढाते रहे हैं। लेकिन जब यकील साहन हमारा मुकद्दमा जीत जाते हैं, जब ब्राह्मण महाराज हमारे लिए कोई पूजा कर देते हैं अथवा जब पुलिम का आदमी हमारे जान भाल का रक्खवाली करता है, तब तो शायद किसी वस्तु के रूप में परिवर्तन नहीं होता। उपयोगी तो ये सेवाएँ भी होती हैं परन्तु यह ऊपर से बताइ वस्तुओं से भिन्न है। इनसे हमारी विविध आवश्यकताएँ सीधी सीधी पूरी होती हैं। पहले दिये गए

उदाहरण अर्थात् किसान का अनाज पैदा करना, दर्जी का कोट सीना, बट्टा का हल बनाना आदि भौतिक (material-production) उत्पत्ति के उदाहरण हैं। लेकिन वकील, पुलिस, मास्टर वगैरह के कार्य अभौतिक उत्पत्ति (Immaterial production) के अन्तर्गत शामिल किये जाते हैं। भौतिक उत्पत्ति करते समय किसी वस्तु का रूप, स्थान आदि बदल कर उपयोगिता की वृद्धि की जाती है। अभौतिक उत्पत्ति के लिये सेवाकार्य किये जाते हैं कि जिससे मनुष्य की आवश्यकता सीधे सीधे पूरी हो जाती है। उत्पत्ति किस प्रकार होती है। उत्पत्ति करने में कौन कौन मदद करता है, किस किस शक्ति की जरूरत पड़ती है इत्यादि सवालों का जवाब भा हमें अर्थशास्त्र से ही मिल जाता है। यह तो सब कोई जानता है कि प्रत्येक काम के करने में मेहनत करनी पड़ती है। लेकिन मेहनत किस वस्तु पर की जाती है? मेहनत करने का सबसे सीधा उदाहरण है—धूमना या दौड़ना। धूमते या दौड़ते समय आप हवा में तो चलते ही नहीं। चलते हैं जमीन पर ही। अतएव यदि यह कहा जाय कि किसी भी कार्य में मेहनत और भूमि दोनों की आवश्यकता पड़ती है तो गलत न होगा। चहुँपचा यह देखा गया है कि काम करने में आदमी किसी चीज की मदद लेता है और वह भी इसलिये कि काम करने में सुभीता होता है। लकड़हारा जंगलों में जाकर उन लकड़ियों को चटोर कर बेचने ला सकता है जो भूमि पर टूट पड़ी हो। घास बेचने वाला हाथ से घास उखाड़ उन्वाड़ कर जमा कर सकता है। लेकिन वह वाहता है कि घास छीलने में आसानी हो जाय, अर्थात् जल्दा जल्दा घास छीलने लगे और इसी कारण से वह खुर्ची का प्रयोग करता है। इसी प्रकार से लकड़ी वाला कुल्हाड़े से काम लेता है। खुर्ची और कुल्हाड़ा मोल लेने के लिए रुपया खर्च करना पड़ता है। इसलिए ये दोनों चीजें धन के रूप हैं। खेती करने में भी इसी प्रकार भूमि, श्रम और पूँजी की जरूरत पड़ती है। यदि खेत की जमीन न हो तो किसान बीज कहीं ढोवेगा। वह हल, बैल, पावड़, हथिया, खुरपा के रूप में धन लगाता है और स्वयं मेहनत करता है। पर तु इन तीनों के अलावा उत्पत्ति के किसी कार्य में प्रयत्न व साहस भी स्थान रखते हैं। हमारा खेतिहर यह

निश्चय करता है कि खेत में कितना पानी डाला जाय। खेत को कितना गहरा खोदा जाय। क्या बरसात में खेत का पानी बह कर निम्न जाने दें अथवा उसे खेत ही में रहने दें ? कौनसी फसल बोना ठीक होगा। इन सब बातों का प्रबंध तो किसान करता ही है परन्तु किसी किसी समय वह किसी बात का निश्चय नहीं कर सकता। मान लीजिये कोई ज़मीन रामू किसान के पास नहीं थी और इस साल उसने उसे माल ले ली। उस भूमि के बारे में रामू सब बातें नहीं जानता। क्या वह उस टुकड़े की जमीन के और टुकड़ों से अधिक गहरा खोदे ? क्या वह उस खेत में अधिक खाद व पानी डाले या कोई नई फसल पैदा करे जा उसका पहले कभी पैदा नहीं की है। इन सब बातों में रामू को साहस से काम लेना पड़ना है। इस तरह से उत्पत्ति (Production), में भूमि (Land), धम (Labour), धन अथवा पूंजी (Capital) प्रबन्ध (Organisation) और साहस (Enterprise) नामक पाँच शक्तियाँ काम करती हैं।

उपभोग (Consumption)

उत्पत्ति का अर्थ समझ लेने पर अब हम उपभोग व सम्पन्न में भिन्न कर रहे हैं। रामू किसी खेत में क्या बोवेगा, इससे अब हमसे बिनमुक्त मतलब नहीं। वह स्वतंत्र है। चाहे वह गेहूँ बोवे, चाहे चना, चाहे जौ या बाजरा। मान लीजिये वह गेहूँ बोता है। फसल के पक जाने पर किसान गेहूँ को काट-माड़ कर घर में लाता है। घर वाले उसको पीस कर रोटियों बनाते हैं और सब कोइ उसे खाते हैं। खाने से किसान की भूख मिट जाती है। उसे एक तरह का सतोष मिलता है और हम कहते हैं कि किसान ने रोटी का उपभोग किया। आमतौर पर उपभोग से किसी वस्तु का उपयोग करने या सेवन करने का मतलब निकाला जाता है। लेकिन अर्थशास्त्र में उपभोग के मतलब कुछ और ही होते हैं। मान लो तुम्हारे पास रोटी का एक टुकड़ा है। उसे तुम खा भी सकते हो और आग में डाल कर जला भी सकते हो। दोनों हालत में कहा जाता है कि रोटी का उपभोग हो गया लेकिन अर्थशास्त्र के मत से केवल जब रोटी खाई जाती है तभी उसका उपभोग समझा जाता है अथवा नहीं। रोटी खाने से ही मनुष्य को एक प्रकार का सतोष मिलता है।

लेकिन यदि रोटी आग में जला दी जाय तो किसी की आरक्ष्यता पूरी नहीं होती और इसलिए किसी को सन्तोष नहीं मिलता । रोगी खाद जाय अपना जलाद जाय दोनों हालत में उसकी उपयोगिता नष्ट हो जाती है । अतएव अर्थ शास्त्र के अन्तगत जब किसी सेवा या वस्तु का इस प्रकार से उपयोग किया जाता है कि मनुष्य की कोई आरक्ष्यता पूरा होती हो अर्थात् जिससे मनुष्य को किसी प्रकार का सन्तोष मिलता है तभी हम कहते हैं कि उस सेवा या वस्तु का उपभोग किया गया । एक बात और, कभी कभी किसी वस्तु का उपयोग किसी अन्य वस्तु के पैदा करने में किया जाता है जैसे किसी कारखाने में कोयले का उपयोग । यहाँ पर दर्पना चाहिये कि कोयले के जलने से किसी आदमी को कोई इच्छा पूरी हुई या नहीं । उत्तर है कि हमारे देखते तो कोई इच्छा पूरी होती दिखाई नहीं देती । और जब यह हाल है तो अर्थ शास्त्रों ऐसी वस्तु के इस तरह जलने को उपभोग नहीं कहेंगे । हाँ, अगर जाड़े का दिन हो और आप कोयला जला कर आग तापें तो हम कहेंगे कि आपने कोयले का उपभोग किया, क्योंकि इस बार कोयला जलाने से आपकी ठण्ड दूर करने की इच्छा पूरी हो गई ।

उपभोग के सम्बन्ध में यह जानना जरूरी है कि इसी के लिए आदमी सब चीजें पैदा करता है और जितनी चीजें पैदा की जाती हैं उन सब का उपभोग किया जाता है । परन्तु किसी आदमी की एक समय में एक इच्छा तो होती नहीं । हर वक्त बहुत सा बातें उसके दिमाग में घूमा करती हैं और सब से बड़ा प्रश्न यह उभरता है कि कौन सी इच्छा पहले पूरी की जाय । इसका साधारण सा उत्तर है उस इच्छा को जिसको पूरा करने से सबसे अधिक सन्तोष या उपयोगिता (Utility) प्राप्त हो । लेकिन आमतौर पर आदमी क्या करते हैं ? कौन सी वस्तुएँ आरक्ष्यक (Necessaries) होती हैं, कौन आरामदायक (Comfort) और कौन गुलछरे उठाने के लिये बग़ाइ जाती हैं ? विज्ञानकर्मी किसे कहते हैं ? उपभोग में इन सब प्रश्नों पर विचार होता है । उससे यह भी पता लगता है कि जो वस्तु किसी गरीब किसान के लिए आरामदायक (Comfort) और विलासपूर्ण (Luxuries) हो वही जमींदार के लिए आवश्यक हो सकती है । अपनी आमदनी का विचार न कर जो

गरीब किसान रोज हलवा पूरी उड़ाता है उसे दुनिया भोग जिलासी कहती है । लेकिन जमींदार हलवा पूरी आवश्यक समझते हैं । उनके हिसाब से श्रीमिरी टाट के अन्दर रेडियो, बिजली, मोटर आदि स्थान रखते हैं । इस बात से रहने-सहन के दर्जे की समझा उठती है । एक मजदूर किस तरह की निन्दगा बसर करता है पचास पाठ रुपया मासिक तनख्वाह पाने वाले क्लर्क साहब किस प्रकार रहते हैं ; महीने में सौ दो सौ रुपए पैदा कर लेने वाले दूकानदार तथा उद्योग धंधे वाले कैसा जीवन व्यतात करते हैं और हजार पाँच सौ रुपये माहवारी षटकारने वाले जमींदार, डाक्टर या कलक्टर साहब किस मौज से रहते हैं, इन सब बातों का बखान व विवेचन रहने-सहन के दर्जे (Standard of living) के अन्तर्गत किया जाता है । जैसे जैसे श्राय बढ़ती है वैस ही वैस मनुष्य अच्छी जि दगी बसर करने की कोशिश करता है और उसके रहने सहन का दर्जा ऊपर को उठता जाता है । इतना ही नहीं कि सा देश के रहने वाले को किस प्रकार रहना चाहिये, वहाँ की सरकार को उपभोग (Consumption) के सम्बन्ध में किन किन बातों में देखन देना चाहिये इत्यादि और भी बहुत सी बातें हमें उपभोग के अन्तर्गत ही माननी पड़ती हैं । अस्तु हम जान गए कि अर्थ-शास्त्र में उपभोग (Consumption) का मतलब किसी चीज़ के ऐसे उपभोग से होता है जिससे किसी आदमी को सताप हो । अर्थ-शास्त्र के इस भाग में यह विचार किया जाता है कि मनुष्य जो तरह-तरह की वस्तुओं का उपभोग करता है कहीं तक उसने और देश के लिये लाभदायक है और किस हालत में वह हानिकर होता है । लगे हाथ इस बात का भी विचार किया जाता है कि मनुष्य कैसा रहता है और उसका रहने सहन का दर्जा क्या होना चाहिये तथा उस दर्जे को बनाए रखने के लिये देश की सरकार का क्या करना चाहिये ?

विनिमय (Exchange)

लेकिन सोचने की बात है कि आजकल कोइ आदमी अपने श्राय मतलब की सारी वस्तुयें नहीं उत्पन्न करता । कोइ केवल किसानी करता है तो कोई नौकरा, कोइ मजदूर है तो कोइ बटइ, कोइ घोषी है तो कोई चमार । चमार के लिए यह मिलकुल ज़रूरी है कि जूते बेचने से आने वाले पैसों से

आटा खरीदे और मज़दूर मज़दूरी की रकम से दाल-चावल मीन ले। ऐसा क्यों होता है ? बनिये के पास आटा इतनी अधिक मात्रा में रहता है वह आटे से पैसों को अधिक उपयोगी समझता है और हमारे चमार के पेट के लिए तो आटा ज़रूरी है ही। कहने का मतलब यह है कि दानों और बालों को कुछ फायदा होता है तभी अदल बदल होता है। और जब दो वस्तुओं का अदला बदला होना है तो एक वस्तु के कुछ नज़रन के लिए यादों की दूसरा वस्तु दो जाती है। उदाहरण के लिए हो सकता है कि बीस सेर गेहूँ के लिए दस सेर चावल मिले। इस प्रकार अर्थ-शास्त्र (Economics) की दृष्टि से दो सेर गेहूँ का मूल्य हुआ एक सेर चावल। आचल गँवा को छाड़ कर शहरों में तो ऐस उदाहरण उड़ी मुश्किल से मिलते हैं। आधुनिक पैस देकर हम नुम बाज़ार से तरकारी, मसाला आदि खरीद लाते हैं। अब अगर सेर भर गेहूँ का मूल्य दो आना है तो हम कहेंगे कि गेहूँ की कीमत दो आने से है। वस्तुओं की इस तरह से लेने देन का नाम विनिमय है। पहले जमाने में जब रुपये पस का चयन नहीं था तो वस्तु का वस्तु से ही विनिमय होता था।

विनिमय के साथ प्रश्न उठता है कि विनिमय के दर के सम्बन्ध में किस प्रकार यह निश्चित किया जाय कि एक रुपये के बदले में कितने सेर गेहूँ बचा जाय अथवा एक मिर्चई को बनाने के लिए रामू किसान गाजी दरजी को कितना चना देवे। इसका अलावा विनिमय के अध्ययन से हमें पता चलता है कि गाँव के किसान अथवा अथ कारीगर अपने अपने माल को बाज़ार में लाकर किस प्रकार बेचते हैं ? गाँवों के हाट और मेले-उत्सवों कितना महत्त्व रखते हैं ?

वितरण (Distribution)

उपभोग करने वाले की दृष्टि से तो हमने देखा लिया कि वह किस प्रकार विनिमय करके किसी वस्तु का उपभोग करता है। अब हमें देखना चाहिये कि बेचने वाला बिक्री से आने वाले धन में से किस प्रकार अपना हिस्सा लेता है। क्या सारी रकम उसी की होती है अथवा कोई दूसरा भी उसमें साझीदार होता है। मान लीजिये किसान अपने अनाज को शहर वाले व्यापारी का दे

देता है और यह उसे शहर के बाजार में जाकर बेचता है। बेचने से जो 'दाम' आएगा उसका किस प्रकार बँटवारा किया जाय। सोचने पर मालूम पड़ता है कि उत्पत्ति में जो शक्तियाँ मिल कर काम करती हैं उनके मालिक अनाज को बेचकर आने वाली रकम के हकदार हैं। इसलिए हमारी समस्या यह हो जाती है कि किस प्रकार से निपटारा किया जाय कि भूमि मालिक को कितना लगान, मजदूर को कितनी मजदूरी व मजानन को कितना सूद मिले ? परन्तु यहाँ पर हम एक बात भूल जाते हैं। उसे साफ करने के लिए भोग देर के लिए मिन मालिक को ले लीजिये। वह मिन का काम कर रहा है और हर साल बीम की रकम देता है। इसने अलावा हर साल उसकी मरानें कुछ न कुछ घिस जाती हैं। उनके लिए भी उसे आन वाली रकम में से कुछ निकाल कर अलग रूप देना चाहिये। इन सबका काट कर जो बचता है वह जमीन के मालिक, मेहनत करा वाले मजदूर, धन लगाने वाले मजानन, प्रबंधकता व साहस प्रदान करने वाले मनुष्य के बीच बाँटा जाना चाहिए। परन्तु यह कोई जरूरी नहीं है कि पूर्णों काय भिन्न व्यक्ति करें। हम जानते हैं कि मिन मालिक मर्या भी लगाता है, प्रबंध भी करता है और साहस भी दिखता है। इसी तरह किसान अधिकतर मेहनत भी करता है और अनाज पैदा करने के लिए पूजा भी लगाता है। अब प्रश्न यह उठता है कि इन दोनों के बीच किस हिस्से से रकम का बँटवारा हो। इसका उत्तर हमें अधःशास्त्र के वितरण विभाग से मिलता है।

यही नहीं, इस भाग में यह भी विचार किया जाता है कि कहीं भूमि वाला इतना अधिक भाग तो नहीं ले लेता कि मजदूरों के पास बहुत कम रह जाता हो और उनका हालत खराब हो जाए। इसका अलावा हमें यह भी मालूम होता है कि जमींदारों और किसानों के बीच में कैसा सम्बंध होना चाहिये। धन का वितरण इस प्रकार न होना चाहिये कि जमींदार भी गिनती में किसानों से बहुत कम हैं, गुनधरे उड़ावें और मर मर कर अनाज पैदा करने वाले किसान भूखे मरें और खगार भुगतें। किसानों के पास कितना धन पहुँचना चाहिये ? क्या उनके लिए इतना रकम काफी होगी जिससे उनके कुटुम्ब का काम चल जावे। कहा जा सकता है कि देश की उन्नति के लिए

यह ज़रूरी है कि हर एक देशवासी उन्नति करे अर्थात् प्रत्येक आदमी इतना धन पावे जिससे वह दूसरों को कम से कम हानि पहुँचाते हुए अधिक से अधिक लाभ उठावे ।

सारांश

अस्तु, हम जान गए कि अर्थशास्त्र उस विद्या का नाम है जो मिलजुल कर रहने वाले मनुष्यों के उन प्रयत्नों के बारे में विचार करता है जिनसे वे अपनी अपनी इच्छाओं और आवश्यकताओं को पूरी करते और अर्थ (अर्थात् धन) या अथ सामग्रियाँ उत्पन्न करते हैं । आदमियों के धन सम्बन्धी उपायों का पूरा रूप से विचार करने के अलावा अर्थशास्त्र में देशों की आर्थिक दशा और उन्नति का भी ध्यान रखा जाता है । अर्थशास्त्र का अध्ययन अधिकतर उत्पत्ति, उपभोग, विनिमय और वितरण नामक चार मुख्य भागों में बाँट कर किया जाता है ।

अर्थ-शास्त्र के अध्ययन से लाभ

अर्थशास्त्र के अध्ययन से हमें बहुत लाभ होता है । उसके अध्ययन से हम जान सकते हैं कि हमारा देश जिसको प्रकृति ने भरा पूरा बनाया है—यहाँ भी मिट्टी जलवायु पैदावार के लिए अच्छी है । यहाँ की रानों में खनिज पदार्थ भरा है । जंगलों में कीमती लकड़ी है । नदियों के जल से बिजली पैदा हो सकती है लेकिन फिर भी हमारा देश गरीब क्यों है ? उसकी गरीबी के क्या कारण हैं । यहाँ के अधिकांश निवासियों को भरपेट भोजन भी नहीं मिलता । पढ़िने को बपड़े नहीं मिलते, रहने के लिए मकान नहीं मिलते और बीमारी में उनका इलाज नहीं हो पाता । ऐसा क्यों है ? इस गरीबी को कैसे दूर किया जा सकता है ? किन प्रकार हमारा देश धनी बन सकता है ? जिससे हमारे देशवासी सुखी जीवन व्यतीत कर सकें । अर्थ-शास्त्र के अध्ययन से हमें यह बहुत बड़ा लाभ होता है ।

अभ्यास के प्रश्न

१—अर्थशास्त्र क्या है ? इसके अंतर्गत किन बातों का अध्ययन किया जाता है ?

२—अर्थ शास्त्र की परिभाषा लिखिए । व्यावहारिक जीवन में इसके अध्ययन से क्या लाभ है ?

३—आपके गाँव में या मुहल्ले में कितने अमीर और कितने गरीब कुटुम्ब रहते हैं ?

४—अपने किसी परिचित अमीर मित्र से यह जानने का प्रयत्न कीजिये कि मृतकाल में उनका कुटुम्ब कभी गरीब से अमीर किस प्रकार हुआ ?

५—अपने किसी परिचित गरीब मित्र से यह जानने का प्रयत्न कीजिये कि मृतकाल में उसका कुटुम्ब कभी अमीर से गरीब किस प्रकार हुआ ?

६—अपने गाँव या मोहल्ले के भिन्न भिन्न पेशे के ऐसे व्यक्तियों की सूची तैयार कीजिये जो परिश्रम करके अपनी जीविका प्राप्त करते हैं । इस सूची में उनका पेशा भी बतलाइये ।

७—ऐसी २० वस्तुओं की सूची तैयार कीजिये जिनका उपयोग आपके मकान में प्रति सप्ताह हाता है ।

८—आपके गाँव के साप्ताहिक हाट में अथवा आपके मोहल्ले के बाजार में जो वस्तुएँ बिकती हैं उनकी संक्षिप्त सूची तैयार कीजिये ।

९—किसी गाँव में जाकर यह जानने का प्रयत्न कीजिये कि फसल के तैयार होने पर किसी एक किसान को बढे, लोहार, नाक इत्यादि को कितना अनाज देना पड़ा ।

१०—अपने कुटुम्ब की एक मास की आमदनी और खर्च का पूरा हिसाब रलिये और यह बतलाइये कि भोजन, कपड़ा, किराया, शिवा, दान, धर्म इत्यादि में कितनी रकम छस मास में खच हुई ?

११—यदि तुम्हारे गाँव में किसी को रुपये उधार लेने की जरूरत पड़ती है तो स्पष्टा किससे उधार लिया जाता है और किस दर पर सद् दिया जाता है ?

१२—तुम्हारे गाँव में जमींदार और किसानों का संबंध कैसा है ? क्या किसान जमींदार से प्रेम करते हैं ? यदि प्रेम नहीं करते तो उसके प्रधान कारण क्या हैं ?



दूसरा अध्याय परिभाषाएँ (Definitions)

धन या सम्पत्ति (Wealth)

विद्वाने अध्याय में हम बतला आए हैं कि अर्थ शास्त्र में धन सचची बात का अर्थ क्या रहता है। अब हम धन का अर्थ समझाने का प्रयत्न करते हैं। ससार में सबकुछ रुपये की ही माया है। बिना रुपया के किसी का गुजर नहीं हो सकता। तुम शहर में जरूर गये होगे। वहाँ तुमने देखा होगा कि लोग अच्छे अच्छे कपड़े पहन कर घूम रहे हैं। रिटन, टमटम, मोटर, साइकिल दौड़ रही है। बड़ी बड़ी दुकानों और कोठियों में लाखों रुपए के माल भरा हुआ है। अमीर आदमियों के ऊंचे ऊंचे मकान बने हुए हैं। अमीर कौन कहलाता है? वह जिसके पास गूब धन दौलत होती है, जो बड़ी बटिया शानदार कोठी में रहता है, तथा जिसके यहाँ बहुत से नौकर चाकर होते हैं। लेकिन क्या अमीर आदमी की तमाम दौलत रुपए के रूप में ही रहती है? उत्तर है नहीं। किसी मनुष्य के धन से उसका रुपया, जेवर, मकान, जमीन इत्यादि कीमती वस्तुओं का बोध होता है और वही मनुष्य धनवान कहलाता है जिसके पास ये सब चीजें अधिक तादाद में होती हैं। लेकिन अर्थशास्त्र केवल इन चीजों को ही धन नहीं कहते। अर्थशास्त्र में हम उन वस्तुओं को धन के नाम से पुकारते हैं जिनको हम काम में ला सकते हैं और जो बेची जा सकती हैं। उदाहरण के लिए गेहूँ को ले लो इसको पीस कर हम आटे की रोटियाँ पका सकते हैं और रोटियों का खाने से हमारी भूख मिट जायगी। अतएव गेहूँ उपयोगी है। गेहूँ को हम बेच भी सकते हैं। जबरत होने पर हम गेहूँ देकर घोनी का एक जोड़ा खरीद सकते हैं। या रुपए के बदले में हम गेहूँ दे सकते हैं और राती के बदले में रुखा। अतएव गेहूँ विनिमय साध्य वस्तु है। इसलिए अर्थशास्त्र के हिसाब से गेहूँ भी धन (Wealth) है। हम बात को और साफ करने के लिए दबा को ले लो। यह सबको मालूम है कि वामु हमारे लिए किन्तनी जरूरी है। इसने बिना हम एक घण्टा भी नहीं जी

सकते । इसलिए वायु की उपयोगिता (Utility) बहुत ज्यादा है । परन्तु क्या यह विनिमय साध्य है ? क्या आप वायु के बदले कोई वस्तु ले सकते हैं ? वायु हर जगह मौजूद रहता है । इसलिए किसी का मोल न लेने की जरूरत नहीं पड़ती । यह ईश्वर की देन है और हम इसे धन में नहीं गिन सकते । इसी तरह यदि आप नदी या तालाब से दो चार घड़ा पानी भर कर किसी वस्तु से बदला करना चाहेंगे तो कोई बदला नहीं करेगा । क्योंकि नदी और तालाब का पानी आसानी से अविश्व मात्रा में प्राप्त किया जा सकता है । जिस व्यक्ति को जितना पानी की जरूरत होती है उतना पानी वह आसानी से नदी से ले लेता है । इसलिए पानी हमारे लिए उपयोगी होने हुए भी धन नहीं कहना सकता । परन्तु यही जल सन्तुलना के रेगिस्तान में धन बदलाने लगगा, क्योंकि जल की कमी के कारण वहाँ पर तो सब काइ इसे मोल लेने के लिए तैयार हो जायेंगे । गाय, बैन, मकान, लकड़ी, कड़ा, कोयला, पथ्रन, पेड़, फल, फूल आदि सब वस्तुएँ सम्पत्ति या धन के स्वरूप हैं । और जब ऐसी चीज सम्पत्ति हो सकता है तो इस हिमाय से हम कूवा, करस्ट, गोर, राल, इट्टी आदि तक की गिनती सम्पत्ति में कर सकते हैं ।

केवल रुपया पैसा (Money) ही धन (Wealth) नहीं

हम ऊपर कह आए हैं कि कुछ लोगों के दिमाग से रुपया पैसा व सोना-चाँदी का ही नाम सम्पत्ति है । यह बिल्कुल गलत है । विदुस्त्ताम अब भी कितने गाँव मिल जाते हैं जहाँ पर लोगो के पास रुपए नहीं हैं, लेकिन क्या उन गाँवों में अमीर और गरीब नहीं रहते ? तुम पूछ सकते हो कि फिर रुपया पैसा आया कैसे ? इसकी क्यो जरूरत पड़ी ? असली बात यह है कि बिना रुपए पैसे के सम्पत्ति की बदला बदला करने में बड़ा झंझट करना पड़ता है । मान लो तुम्हारे पास चना है और तुम्हें मिर्च की जरूरत है । अब तुम्हें किसी ऐसे आदमी को तलाश करना पड़ेगा जिसके पास मिर्च हो । खाल करो कि ऐसा मनुष्य मिल गया लेकिन वह मिर्च के बदले में जूता माँगता है । अब दोनों आदमियों को एक तीसरे आदमी का हँडना पड़ेगा जिसके पास जूता हो और जो जूते के बदले में चना लेना चाहता हो । इन्ही सब झंझटों की दूर करने के लिए रुपए पैसे का रिवाज चला है । रुपए पैसे

वे चलन से हम जान सकते हैं कि राम और श्याम में कौन श्रीमंदा है। हम क्या करेंगे ? हम इस बात का पता लगावेंगे कि राम का घर बार, खेत-बात, कपड़ा-लत्ता आदि का क्या दाम है ? मान लो सब मिला कर चार हजार रुपया हुआ और श्याम के पास इस तरह से छै हजार का माल निकला तो हम कहेंगे कि श्याम राम से श्रीमंदा है। अस्तु, यह तै हो गया कि कठिनाइयों को दूर करने के लिए ही रुपए-पैसे चलाए गए और केवल यही धन स्वरूप नहीं है।

पर इस रुपए-पैसे द्वारा हम कोई वस्तु कब खरीदते हैं ? तुम कब गेहूँ खरीदते हो अथवा कब तुम्हारे पिता गाँव के चमार से जूता मोच लेते हैं ? उस समय जब कि उन्हें जूते की जरूरत मालूम पड़ती है। वह जूते के दाम क्यों देते हैं ? क्योंकि जूता हवा या जल की तरह ईश्वर की देन होकर काफ़ी परिमाण में आसानी से नहीं मिल सकता अर्थात् जूतों की सट्टा परिमित है। इसका अलावा एक बात और है। जूता बनाने के लिए चमार को मेहनत करनी पड़ती है। उस मेहनत के बदले में कुछ देना जरूरी है। इसलिए वह दाम देकर चमार से जूता मोच ले आते हैं। तो अब तुम जान गए कि अर्थ शास्त्र में सम्पत्ति किसे कहते हैं। प्रत्येक वस्तु जो उपयोगी होती है, जिसकी सट्टा परिमित होती हो व जिसके प्राप्त करने के लिए भ्रम करने की आवश्यकता पड़ती है अर्थात् जो वस्तु विनिमय साध्य है, उस वस्तु की गणना हम सम्पत्ति में करते हैं।

सम्पत्ति वृद्धि (Increase of wealth)

यह तो तुम जान गए कि सम्पत्ति किसे कहते हैं पर क्या तुम बता सकते हो कि सम्पत्ति कैसे इकट्ठी की जा सकती है ? अर्थात् किसी प्रकार से एक मनुष्य श्रीमंदा बन सकता है। यह तो हमको मालूम है कि श्रीमंदा के पास वस्तुएँ अधिक मात्रा में होती हैं। अब हमको देखना चाहिए कि वह कैसे श्रीमंदा बना होगा या हम तुम कैसे उसकी तरह धन इकट्ठा कर सकते हैं ? लोग तरह तरह के तरीकों से धन पैदा करते हैं। एक आदमी दिन भर परिभ्रम करके जंगल से घास या लकड़ी लाता है, दूसरा किसी के पास अथवा परिवार या सट्टा में नौकरी करता है, तीसरा दूकानदारी करता है, चौथा

किसान है। ये सब अपना काम अकसर इसीलिए तो करते हैं कि इन्हें धन पैदा करना रहता है। परन्तु हम जानते हैं कि धन की उत्पत्ति के लिए मुख्य शक्तियाँ हैं—भूमि, मेहनत और स्वयं धन भी। मान लो तुम्हारे पास दस बीघा खेत है और तम उससे अधिक में अधिक अनान पैदा कर रहे हो। यदि तुमको और अधिक माल का जरूरत है तो इसका उपाय यही है कि तुम दस को जगह बारह पंद्रह बीघे जमीन में रोती करो। उत्पत्ति बढ़ाने का दूसरा साधन है भ्रम बढ़ाना। अगर खेत में काम करने वाले आठो मजदूर पूरी मेहनत के साथ काम कर रहे हैं तो यह जरूर है कि उनकी संख्या बढ़ा कर दस या बारह कर दी जाय। धन या पूजा का भी यही हाल है। जब आप धनोत्पत्ति की दो शक्तियों को बढ़ा रहे हैं तो आपका तीसरे को भी जरूर ही बढ़ाना पड़ेगा अन्यथा आपका काम नहीं बनेगा। अतएव धनी व समृद्धि शाली बनने के लिए यह जरूरी कि आप अधिक खेत में काम कर, अधिक मेहनत लगावें व अधिक पूँजी का उपयोग करें।

सम्पत्ति और सुख (Wealth and welfare)

वस्तु के उपयोग से सतोष होना है और सुख की प्राप्ति होती है। गरीब मनुष्य के पास वस्तुओं की कमी रहती है, उसके पास सुख प्राप्त करने के साधनों का अभाव सा रहता है। गरीब को अधिक सुखी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उसके धन का परिमाण बढ़ाया जाय, उसकी आमदनी में वृद्धि की जाय। इसी प्रकार अधिक उत्पत्ति की जा सकती है। परन्तु धनी बनने और सुखी बनने में महान अंतर है। यह बात ठीक है कि धनी मनुष्य जो चाहे खो कर सकता है। वह मोटर खरीद सकता है। दो चार लठैत और अन्य व्यक्तियों को नौकर रख सकता है। अन्न खा सकता है। खाना खा सकता है। परन्तु अमीर आदमी बदमाश और बदचलन भी हो सकते हैं। बुरे कामों में रुपया भी लुग सकते हैं। समृद्धिशाली और सुखी बनने के लिए यह जानना जरूरी है कि रुपया किस प्रकार खर्च किया जाता है। सुखी जीवन बिताने के लिये थोड़ी सी सादगी अतिन्याय करनी पड़ेगी। यही नहीं, शान की भी जरूरत पड़ती है। क्या हुआ यदि आपको यकायक एक लाख

दही की लाटरी मिन गइ । यदि आन मूर्य है, यदि आनके लिये काला अक्षर भैंस बरारर है तो आप बड़ी जरूरी सब रूपया उड़ा दे गें । दूसरो ओर अग्रर आन पढे लिखे है, अग्रर आपको अथ रास्त्र की बातें मालूम है तो आन उस धन का उपयोग इस प्रकार से कर सकते हैं कि जिससे आपकी और देश को भी दशा सुधरने लगे ।

उपयोगिता (Utility)

अब प्रश्न उठता है कि आपको किस प्रकार रुपया खच करना चाहिये ? आपको कौन कौन सी वस्तुएँ खरीदनी चाहिए और कितनी ? इससे भी मुख्य सवाल है कि आर क्यो किसी चीज को खरीदते हैं क्योकि आपको उसकी जरूरत रहती है क्योकि वह चोज़ आरक़ लिए उपयोगी है । मान लीजिए आप अपने गाँव के हाट म गए । वहाँ पर बहुत सी चीजें बिकने के लिए आती हैं । कोई कपड़ा खरीदना है, कोई गेहूँ चना खरीदना है, कोई कुछ खरीदना है तो कोई कुछ । आप भी कोई वस्तु पसंद करके खरीद लेते हैं । परंतु क्या आप बता सकते हैं कि आपने उसको क्यो खरीदा ? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए यह जानना जरूरी है कि किसी वस्तु की उपयोगिता क्या होती है ? कहा जाता है कि उपयोगिता किसी वस्तु का वह गुण है जिससे उस वस्तु की चाह होती है । इसका सम्बन्ध मन से होना है । प्रत्येक मनुष्य की इच्छा या रुचि में कुछ न कुछ फक जरूर रहता है । इसीलिए किसी एक चीज की उपयोगिता प्रत्येक आदमी के लिये बराबर नहीं होती और हम उपयोगिता ध्यान किसी नाव या तौल से नहीं कर सकते । लोग किसी वस्तु का मूल्य तय करने में उस वस्तु की उपयोगिता का विचार जरूर करते हैं । मान लीजिये गमू किसान के सामने हल, पावड़ा, खुर्ची आदि रखी है और उससे कहा गया कि वह कुछ मोल ले ले । रामू सोचेगा कि मेरे पास इतना रुपया तो है नहीं कि दो बैन और खरीदूँ । इसलिये हल को मोल लेना ठीक नहीं । पावड़ा भी रामू ने पास कइ है इसीलिये वह पावड़े की भी जरूरत नहीं समझता । लेकिन उसका पास खुर्ची नहीं है । और खेत से घास-पूस उखाड़ कर पेंकने के लिये उसे खुर्ची की जरूरत है । अतएव वह खुर्ची को मोल ले लेगा ।

इसी तरह हम उत्पत्ति में भा करते हैं। हम किसी वस्तु विशेष को उत्पन्न या नष्ट नहीं कर सकते। हम केवल उपयोगिता को ही उत्पन्न करते हैं। उदाहरण के लिये हम को ले लाजिये। बच्चा अपने श्रौंनों का मदद से लकड़ी को काट डाल कर उसे हल का रूप देता है। ऐसा करने से लकड़ी की उपयोगिता बढ़ गई। काम आते आते वह वर्षों के बाद हल टूट जाता है। उसकी उपयोगिता घाटा रहती है। लकड़ी पड़ा रहती है पर हल काम का नहीं रहता।

सीमान्त उपयोगिता (Marginal Utility)

हम ऊपर कह आये हैं कि किसी वस्तु की उपयोगिता भिन्न मनुष्यों के लिये भिन्न भिन्न होती है। अब हम यह बतलाना चाहते हैं कि उसी मनुष्यों के लिये एक वस्तु की उपयोगिता एक दशा में कुछ और हो सकती तो दूसरी दशा में कुछ और। उदाहरण के लिये मान लो तुमको ग्युब जोर से भूब लग रही है। उस समय रोटी तुम्हारे लिये बहुत बड़ी उपयोगिता रखती है। पर एक रोटी खा लेने के बाद तुम्हारी मूल कुछ कम हो जाती है और दूसरी रोटी का उपयोगिता उतनी नहीं रह जाती जितनी कि पहली रोटी की थी। तीसरी रोटी की उपयोगिता दूसरी से भी कम होती है। अब अगर तीन रोटी से तुम्हारा पेट भर चला हो तो तुम सोचोगे कि चौथी रोटी भी जाय या नहीं। मान लिया तुमने चौथी रोटी ले ली। इसको खाने में तुम्हारा पेट बिस्कुल भर गया। अब अगर कोई तुम्हारे आगे दो चार रोटियाँ और दान दे तो तुम्हारे लिए उनका मूल्य नहीं के बराबर है। चूँकि पहली चार रोटियों से तुम्हारे पेट को पूरा सतोष मिल चुका इसलिए तुम पॉचवीं व... छठीं रोटी को बिस्कुल नहीं खाओगे। उपयोगिता के घटने का एक बड़ा अच्छा उदाहरण मिलता है जब कोई मधुरा का चौबे भोजन करने बैठता है। जब वह खाकर उठने लगता है तो आप कहते हैं कि चौबे जो एक लड्डू और रो ले लीजिए। चौबे महाराज सिर दिना देते हैं। इस पर आनका दोस्त हरा कह उठना है कि चौबे जो एक लड्डू खा लो तो एक आना पैसा दोगे पेने के लोभ में चौबे लड्डू लेकर खा जाते हैं। जब वह उठन लगते हैं तो अबकी बार आनका दूसरा मित्र श्याम कहता है कि महाराज एक लड्डू

और ले लो तो मैं आपकी एक दुश्मनी दूँ। महाराज रानी हो जाते हैं। इसी प्रकार तीसरे लड्डू पर चौब जी को चार आने और चौबे पर आठ आने दिये जाते हैं। पाँचवें लड्डू के लिये एक रुपया इनाम रक्का जाता है लेकिन इस बार पेट जवाब दे देता है। चौबे जा ने अब तक जो चार लड्डू खाए उसकी उपयोगिता पहले खाए भोजन में कहीं कम थी। परन्तु उनकी उपयोगिता में जा कमी होती वह पैसों का उपयोगिता व कारण पूरी हो जाती थी और चौब महाराज का पेट किसी तरह ठूस ठाम कर लड्डू को स्थान दे देता था। लेकिन अब पेट एक दम भर गया। और चौबे महाराज उन बिल्कुल नहीं खा सकते। इसलिए एक छोड़ अगर उन्हें दस हरया भो दिया जाय तो वे उस पाँचवें लड्डू को न खायेंगे।

अर्थशास्त्र व हिसाब से ऊपर दिए गए उदाहरण में रोटी खाने वाले के लिए रोटीयों की सीमा व उपयोगिता चौथा रोटी की उपयोगिता के बराबर है। इसी प्रकार यदि मनोहर के पास बांस आम हैं तो आमों की सीमान्त उपयोगिता चौथवें आम की उपयोगिता के बराबर होगी। परन्तु ध्यान देने की बात यह है कि आमों की सीमा व उपयोगिता (marginal utility) और कुल उपयोगिता में फरक है। कुल उपयोगिता तो तीसों आमों की उपयोगिता के जाड़ के बराबर है, लेकिन सीमान्त उपयोगिता केवल अन्तिम आम की उपयोगिता के बराबर होती है। अगर मनोहर के पास एक ही आम होता तो कुल उपयोगिता सीमान्त उपयोगिता के बराबर हो जाती। परन्तु जैसे जैसे वस्तु की संख्या या परिमाण बढ़ता जायगा वैसे उनकी सीमांत तथा कुल उपयोगिता के बीच का फरक भी बढ़ता जायगा।

मूल्य (Value)

मान लो बाजार में तुमने गेहूँ और चना दोनों बिकते हुए देखे। और तुम दोनों को खरीदना चाहते हो। अब अगर तुम्हारे हिसाब से गेहूँ की उपयोगिता चने से दुगुनी है तो तुम एक रुपये में जितना गेहूँ लोगे उसी रुपये में उससे दुगुना चना माँगोगे। उदाहरण के लिए अगर तुम एक रुपये में दस सेर गेहूँ लोगे तो बीस सेर चना माँगोगे। यदि कहीं तुम गेहूँ बेचने वाले होते और श्याम चने वाला तो तुम श्याम से फी सेर भर गेहूँ की जगह दो सेर

चने माँगते । और यदि श्याम भी एक मेर गहूँ के बदले दो सेर चना देने को राजी हो जाय तो दो मेर चना का मूल्य एक सेर गहूँ समझा जायगा । इसी तरह अगर तुम अपनी गाय को बेंच बकरियाँ खरीदना चाहो और अगर तुम्हारी निगाह में गाय की उपयोगिता बकरियों से तिगुनी हो तो तुम एक गाय के बदले में तीन बकरियाँ माँगोगे । जब किसी वस्तु को किसी अन्य वस्तु से बदला बदला की जाती है तब पहली वस्तु के बदले में दूसरी वस्तु कितनी दी जाय इसका निश्चय उपयोगिता द्वारा ही होता है । ऐसी हालत में अर्थशास्त्र में अनुभार एक गाय का मूल्य तीन बकरियाँ हुई और एक सेर गहूँ का मूल्य हुआ दो सेर चना ।

मूल्य (Value) का जो अर्थ ऊपर दिया गया है उससे क्या नतीजा निकलता है ? इसने मतलब होते हैं कि यदि एक चीज का मूल्य घट जायगा तो दूसरी का कम हो जायगा । मान लीजिये कि पहिले दो आम का मूल्य होता था एक खरबूजा । अब यदि किसी तरह आम कि फसल आधा हो तो आम का मूल्य दुगुना हो जायगा यानी दो आम के बदले दो खरबूजे मिलेंगे या एक आम के बदले एक खरबूजा मिलेगा । आम का मूल्य तो दुगुना हो गया पर खरबूजे के मूल्य का क्या हाल है । जहाँ पहले एक खरबूजे के लिये दो आम मिलते थे वहाँ अब एक ही आम मिलता है अर्थात् खरबूजे का मूल्य आधा हो गया । एक बात और । यदि कहीं आम की फसल न बिगड़ती पर खरबूजों की संख्या दुगुनी हो जाती तब भी वही बात होती जो आमों के आधे रह जाने पर हुई थी । अर्थात् एक खरबूजे के लिये एक ही आम मिलता ।

कीमत (Price)

पुगने जमाने में जब—रूपये—वैसे का चलन नहीं था तब एक वस्तु दूसरी वस्तु से बदली जाती थी । उस समय मूल्य का बोलबाला था । परन्तु उसमें कठिनाई होती थी । अगर सुमेर को किसी वस्तु की जरूरत है तो उसे ऐसे मनुष्य को ढूँढना पड़ता था जिसके पास वह चीज़ हो जिसकी सुमेर को आवश्यकता है । इतना ही नहीं उस मनुष्य को ऐसी वस्तु की आवश्यकता होनी चाहिए जो सुमेर के पास है । इसके अलावा यह भी भगडा रहता कि हर एक

अपनी अपनी चीजों बदलने को तैयार हा । मान लो सुमेर को एक कम्बल की जरूरत थी और कुबेर जिसने पास कम्बल है सुमेर का गम काट लाना चाहता है । लेकिन अगर सुमेर कोट देने को राजा नहीं हो तो अदला बदली हाना असंभव है । जब से रुपए पैसे का उपयोग होने लगा तब से ये सब बाबाएँ फट गइ । अगर तुम अपना सेर भर घी बेच कर चार सेर शक्कर खरीदना चाहते हो, तो येवल इस बात की जरूरत है कि तुम किसी के हाथ अपने घी को एक रुपए में बेच दो । और उस रुपये की जाकर शक्कर खरीद लो । ऐसी हालत में सेर भर घी का मूल्य हुआ एक रुपया और सेर भर शक्कर के चार आने । जब किसी वस्तु की इकाई का मूल्य इस प्रकार रुपये पैसे में लगाया जाता है, तो वह मूल्य वस्तु की इकाई की कीमत कहलाता है । अगर हम एक गाय साठ रुपये में बेचते हैं तो गाय का कीमत हुई साठ रुपया । लेकिन अगर हम उसको तीन बकरियाँ व एब्रज में बेचते हैं तो तीनों बकरियाँ कीमत न कहला कर गाय का मूल्य कहलाती है । तो मोटी बात यह है कि किसी चीज के बदल में जो चीज मिले वह उसका मूल्य है और उसका बदल में जो रुपया मिले वह उसकी कीमत है ।

आय (Income)

अब तक हम और किसी वस्तु की उपयोगता, मूल्य और कीमत व बारे में बातें कर रहे थे । मान लो मुरली अनाज को दूफान खपता है । वह हर समय रुपये के बदले गेहूँ, चना, मटर, जौ, चाबरा, अरहर, मूँग, चावल आदि अन्न बेचा करता है । बेचने से जो रुपये आते हैं उन्हें वह एक कापी पर लिखता जाता है । महीने व आब्विर में चौड़ लगाने से उस मालूप पड़ जाता है कि महीने भर में उसे कितने रुपये मिले । इस आमदनी व याग से अगर हम वह रकम निकाल दें जिसका कि मुरली ने अनाज खरीदा था तो बची हुई रकम मुरली की आय कहलाएगी । इसी प्रकार कनक माइन महीने भर काम करने के बाद पहली तारीख को अपना वेतन लेकर घर जाते हैं । परन्तु यह वेतन है क्या ? यह है फ्लक साइव की महीने भर व काम की कीमत और अर्थशास्त्र में ऐसी कीमत की आय कहते हैं । मजदूरों को अपनी मजदूरी रोजाना, हर हफ्ते, पंद्रहवें दिन अथवा महीने पर मिलती है ।

महीने भर में उन्हें कुल जितना रुपया मिलता है वही उनका माहवारी आय होती है। आय राशाना से लेकर मालाना तक हो सकती है। अर्थशास्त्र में आय से उस रकम का राय होता है जो कौन मनुष्य किसी निश्चित समय में कमाता है। समय के किन्ना परिमाण की आय निर्भर करेगी यदि आय निश्चालने वाले का इच्छा पर निर्भर रहती है। अधिकतर आय से लोगों का मतलब माहवारी आय में रहता है। लेकिन कहीं कहीं सालाना आय रिपोर्ट करनी पड़ती है। तुम्हें मालूम है कि भारत की सरकार तुम्हारी आय के ऊपर आयकर या इन्कमटैक्स लगाती है। इस आय व निकालने में मकान के किराय और बैंक में जमा सूद से लेकर कारखार का मुनाफा तक इस आय में जोड़ लिये जाते हैं।

अभ्यास के प्रश्न

१—'विनिमय साध्य' वस्तु किसे कहते हैं ? उदाहरणों सहित समझाइये। क्या ज्ञान विनिमय साध्य है ?

२—निम्नलिखित वस्तुएँ किन दशाओं में घन समझी जावेंगी ? गंगा जल, यन्मानी, रेल का टिकट, घर का कूड़ा-कचरा, कागजी मुद्रा, नोट, मनुष्य का शरीर, अस्पताल सार्वजनिक पुस्तकालय।

३—कुछ ऐसा वस्तुओं का उदाहरण दीजिये जिनका उपयोगिता किसी वस्तु के लिये समय के साथ बदलती जाती है।

४—निम्नलिखित वाक्यों की गलतियों को दुरुस्त कीजिये —

(अ) २० सर गेहूँ की कामत २) है।

(ब) पाँच सेर चावल की कीमत दस सेर गेहूँ है।

(स) ५ गावों की कामत १२५ रुपया है।

(ड) एक सेर चना का मूल्य ६ पैसे है।

(क) एक गन ऋपड़े का मूल्य तीन आना है।

५—अपने कुटुम्ब की आमदनी का एक मास का हिसाब लिखिये और यह बतलाइये कि किन किन जरूरतों से कितनी आमदनी प्राप्त हुई ?

६—यदि कोई मनुष्य अपने निजा मकान में रहता है तो उसको अपने मकान से वष भर में क्या आमदनी होती है ?

७—आर्थिक उन्नति क क्या मापन है ? गरीब लोग अधिक सुखी कैसे हो सकते हैं ?

८—घनी लोग भी कभी दुखी पाये जाते हैं । उनके क्या कारण हैं ?

९—मादगी जीवन का मुल की वृद्धि से क्या सम्बन्ध है ?

तीसरा अध्याय

उत्पत्ति (Production)

उपयोगिता-वृद्धि (Increase in utility)

प्रत्येक मनुष्य को भोजन, कपड़ा आदि की जरूरत पवती है । इनके बिना उसका काम ही नहीं चल सकता । अरनी इन आवश्यकताओं को पूरा करने क लिए उसे तरह तरह की वस्तुओं को बनाना या तैयार करना पड़ता है । मिल-जुल कर रहने वाले किसी भा मनुष्य का देण लो । वह हर समय इस बात का उगाय करता है कि उसे किसी प्रकार घन मिले । घन की उत्पत्ति करने के लिय आदमी दिन भर महनत करक जगल से लकड़ी या घास काट कर लाता है, दूसरा किसी के यहाँ नौकरी करता है, तीसरा दुकानदार है तो चौथा डाक्टर । यह तो हम आपको पहले ही अध्याय में बता चुके हैं कि अर्थशास्त्र में उत्पत्ति का क्या मतलब होता है । और यह भी कह चुके हैं कि उत्पत्ति किस प्रकार की जा सकती है । कोई वस्तु उत्पन्न करने के मतलब होते हैं किसी प्रकार की उपयोगिता को बढाना । कुम्हार मिट्टी के बर्तन बना कर मिट्टी की उपयोगिता में वद्धि करता है ? बर्तन लकड़ी को काट छोट कर मेज़ कुर्सी बनाता है । ऐसे करने से लकड़ी की और उपयोगित बन जाती है । इसी प्रकार के रूप परिवर्तन द्वारा चना, मटर, गेहूँ आदि अनाज सेती से पैदा किये जाते हैं । खेती बारा में अन्न पैदा करने का काम तो स्वयं प्रकृति करती है । मनुष्य तो केवच बीज, खाद, पानी वगैरह का इतनाम करता है । परन्तु, स्थान और अधिकार बदल देने से भी किसी का उपयोगिता बढाई जा सकती है । जहाँ जा सामान अधिक मात्रा में

होता है वहाँ से जगह है उन जगहों में ले जाया जाता है जहाँ उस सामान की माग्ना कम है, तो उसकी उपयोगिता बढ जाती है। लोहे, कोयले या पत्थर को अपने खाने व पात या लकड़ियों की जगह में उपयोगिता बहुत कम होती है। लेकिन जब यही चीजें रेल या मोटर द्वारा बाजार में पहुँचा दी जाती हैं तो इनकी उपयोगिता बढ जाती है। इसी प्रकार अन्न, साग, फलों को खेतों वा बागों से बाजार में पहुँचा कर उनकी उपयोगिता बढाई जा रही है। जब हम किसानों से अनाज माल लेकर बाजार में किसी घर गृहस्थी वाले आदमी व हाथ उसे बेच देते हैं तब भा उपयोगिता बढती है। क्योंकि किसान के अधिकार में तो इतना अनाज है कि उसके लिये उसकी उपयोगिता कम है लेकिन पर गृहस्थी वाला आदमी खाने के लिए अनाज चाहता है और इसलिए उसने अधिकार में पहुँच जाने से अन्न अधिक उपयोगी बन जाता है। उसकी उपयोगिता बढ जाती है। उपयोगिता वृद्धि में समय भी सहायता करता है। नये चावल की प्राय बहुत कम कदर होती है। लेकिन अगर नया चावल साल दो साल रख छोड़ा जाय तो उसमें कुछ खास गुण आ जाता है और उसकी कदर या उपयोगिता बढ जाती है। इसी तरह माघ पूस में चरफ को कोइ नहीं पूछेगा। अगर उसे किसी तरह गर्मियों तक रख सक तो उसकी बड़ी कदर होगी।

यह तो हमने देख लिया कि रूप, काल, स्थान या अधिकार परिवर्तन व द्वारा उत्पत्ति या उपयोगिता वृद्धि की जा सकती है। परंतु इन परिवर्तनों के करन में हमको किसी शक्ति का सहारा देना पड़ता है ? कुछ समय पहले तब घन की उत्पत्ति के लिए तीन चीजों की जरूरत माना जाती थी — भूमि, (Land) मेहनत (श्रम) (Labour) और पूँजी (धन) (Capital) चाहे जिस ढंग से धन उत्पन्न या पैदा किया जाय इन तीनों साधनों की आवश्यकता पड़ेगी। इनसे अलावा आज कल दो शक्तियाँ और मानी जाती हैं — प्रथम १, सहास (Organisation and Enterprise) इसके पहले कि हम इन शक्तियों पर विचार करें, हमें यह देख लेना चाहिए कि कुछ चुने हुए उदाहरणों में ऊपर शक्तियाँ किस प्रकार भाग लेती हैं।

पहले रूप परिवर्तन द्वारा होने वाली उपयोगिता वृद्धि (Increase)

in utility) के साधनों की ही लीजिए, इस रीति से कच्चा माल पैदा किया जाता है। कच्चा माल बहुधा खेती से हाता है। हमारे भारत से ज्यादातर लोग खेती करके ही अपना पेट पालते हैं। अच्छा, इनमें ऊपर उताए साधन या शक्तियाँ किस प्रकार काम आती हैं ? बिना भूमि क खेती नहीं हो सकती, और मेहनत करने वाले मनुष्य बिना खेती करेगा ही कौन ? लेकिन जमीन और मनुष्य के होने से भी तो खेती नहीं हो सकती। उसके लिए बीज, हल, बैल, खाद आदि की भी आवश्यकता होती है। ये चार्जे मनुष्य का धन है, लेकिन अब ज्यादा धन उत्पन्न करने के लिए काम में आने के कारण इनका नाम पूँजी हो जाता है। इससे साफ प्रकट है कि खेती करने के लिये भूमि, श्रम और पूँजी की आवश्यकता पड़ती है।

अब कारीगरी का एक उदाहरण लातिये। तैयार माल भी रूप परिष्करण द्वारा ही बनाया जाता है। दर्जी का काम ले लीजिये। वह कपड़े की काट-छाँट करके कोट सीता है। इसमें उसे सीने के लिये बैठने को स्थान (दुकान या मकान) चाहिए, यह भूमि है। उस पर बैठ कर वह सिलाई का काम करता है, इसमें उसे श्रम करना होता है। पर उसे कपड़ा, सुई, डोरा आदि चाहिये, तभी तो वह कोट तैयार कर सकेगा। ये चार्जे वह पहले कमाये हुए धन में बचत करके बचाता है और ये उसकी पूँजी है। इसी तरह से बट्टा, लोहार, जुलाहे आदि के कार्य पर विचार किया जा सकता है। अतएव तैयार माल में भूमि, श्रम और पूँजी तीनों की आवश्यकता पड़ती है।

अब तक हमने प्रबन्ध और साहस (Enterprise) का विचार नहीं किया है। आनकल के मशीन युग में अकाला दुकेला आदमी धन पैदा करने का काम नहीं करता। सैकड़ों हजारों आदमी एक ही कारखाने में काम करते नजर आते हैं। ऐसी हालत में इस बात की बड़ी ज़रूरत होती है कि कोई आदमी इन हजारों आदमियों के काम की देख रेख करे और यह निश्चय करे कि कितने आदमी कौन सा काम करे, किस प्रकार की भूमि, श्रम और पूँजी लगाई जाय और कहाँ से कच्चा माल मँगाया जाय इत्यादि इन सब बातों के लिये प्रबन्ध करने की आवश्यकता पड़ती है। इसी प्रकार आज

कल अमेरिका आदि देशों में लुप्त प्रदेशों खेतों में खेती की जाती है। यहाँ पर भी यह देखा जाता है कि खाद कहीं से मँगाई जाय। कितनी खाद की जरूरत है। पानी का कैसे इन्तजाम किया जाय इत्यादि।

इसने अनायास एक ऐसे व्यक्ति-समूह की जरूरत प्यती है जो कारखानों में होने वाले या बड़े परिमाण में की जाने वाली खेती से आने वाले लाभ-हानि को महान का बीड़ा उठाये। मजदूर अपना वेतन ले लेते हैं। प्रबंध करने वाला भी अपना तनखावा लेता है। मूमि का मालिक केवल लगान मात्र चारता है और पूँजी देने वाला सूद। इनमें से किसी को हानि-लाभ से काइ मतलब नहीं रहता। कारखानों के चलने या दूबने का जोखिम उस आदमी या कम्पनी पर रहता है जो उसका चराने का साहस करता है तथा जोखिम उठाती है।

भूमि (Land)

यह तो हमने देखा लिया कि उत्पत्ति के पाँच माघन होते हैं, भूमि, श्रम, पूँजी, प्रबंध और साहस। अब इन पाँचों पर अलग अलग विचार करना भी जरूरी है। पहले भूमि का ले लाजिये। आमतौर पर इससे पृथ्वी तल का मनलव निकाला जाता है, परंतु अमशास्त्र में भूमि से हमारा मतलब उन सब शक्तियों से रहता है जो प्रकृति से प्राप्त होती हैं। इस तरह से खान में निकलने वाले पत्थर, लोहा, सोना, आदि, जल, मट्टी, मीठी, वायु, गर्मी, रोशनी, जलवायु आदि सब चीजें इनके अंतर्गत आ जाती हैं। याद रखने लायक दूसरी बात यह है कि प्रकृति का वही हिस्सा भूमि कहलाता है जिसका उत्पत्ति में प्रयोग होना है।

सब जमीन एक ही नहीं होती। कोई बहुत उपजाऊ होती है, काइ कम और कोई मिट्टून ही नहीं। किसी जमीन की मिट्टी चिकनी होता है अर्थात् उसमें बहुत पाराक कण होते हैं, किसी पृथ्वी में बड़े कण रहते हैं। यह बालूदार कहलाता है। चिकनी और बालूदार मिट्टी के अधिक या कम होने से हा खेतों की मिट्टी कई तरह की हो जाती है। जहाँ तीन भाग चिकनी मिट्टी और एक भाग बालू हो वहाँ खेती अच्छी होती है। बालू का हिस्सा जैसे जैसे बढ़ता जाता है जमीन कम उपजाऊ होती जाती है। नदी या ठालाब

के किनारे उम जमीन में जहाँ बरसात में पानी भर जाता है और फिर सूख जाता है, खेती अच्छी होती है। धान तो ऐसी जमीन में बहुत ही होता है। गाँव के किनारे की जमीन में जिसमें प्रायः बूझा-करकट पैका जाता है या खाद डाली जाती है, बहुत अच्छी फसल होती है।

लेकिन जमीन की उपजाऊ शक्ति की सीमा होती है। अगर हम किसी उपजाऊ भूमि में खाद बगैरह दिए बिना ही खेती करने चने जायें तो दो तान साल के बाद वह कम उपजाऊ हो जायगी। जिस प्रकार मनुष्य को आराम की जरूरत होती है और जिस प्रकार बिना खाने के वह काम करने के लायक नहीं रह जाता उसी तरह जमीन को भी खुराक तथा आराम की जरूरत पड़ती है। खुराक पहुँचाने के लिए यह बड़ी जरूरी है कि जमीन खूब गहरी खादी जाय तथा उसमें खाद बगैरह खूब डाली जाय। खाद की मदद से जमीन अपनी खुराक वायुमंडल से अच्छी तरह से खींच लेती है। इसके अलावा एक ही समय में किसी खेत में बहुत सी पूँजी तथा मेहनत लगा कर उस खेत की उपज बहुत अधिक नहीं बढ़ाई जा सकती। इसकी भी एक सीमा होती है। जिस तेजी के साथ पूँजी व धन बढ़ाया जाता है उस तेजी के साथ उपज नहीं बढ़ती अतएव किसी जमीन में पूँजी व मेहनत लगाने की भी हद्द होती है। व्यापार और कारखानों के काम में भूमि की उपजाऊ शक्ति का ख्याल नहीं किया जाता। कारीगर या कारखाने का मालिक यह देखता है कि जमीन किस जगह है। कारीगर अपनी दुकान बाजार के करीब खोलना चाहता है। मिन मालिक कारखाने को ऐसे स्थान पर चलावेगा जहाँ से खान और बाजार दोनों पास हों। मान लो तुम लोहे का कारखाना खोलना चाहते हो। तुम ऐसी जगह ढूँढोगे जहाँ से लोहे की खान भी पास हो और तैयार माल को बाजार में पहुँचाने का सुभीता भी हो। इन्हीं कारणों से बड़े बड़े शहरों में भूमि का मूल्य या किराया बहुत अधिक होता है।

श्रम (Labour)

यह तो हुई भूमि की बात। अब धन को लीजिए। किसान खेती करने में स्वयं भी मेहनत करता है और पैसा में भी काम लेता है। लेकिन श्रम-

शास्त्र के अतगत वैज्ञानिकों के कार्य को भ्रम में नहीं गिनते। भ्रम ने हमारा मतलब मनुष्य द्वारा की हुई मेहनत से रहता है। मनुष्य अपने मनोरंजन के लिए पुत्रवान, हाकी वगैरह खेल खेलता है। ऐसे खेलों में की गई मेहनत किसी का धन नहीं पैदा करती। अतएव इसको गिनती भी भ्रम में नहीं का जाती। अब अगर आपने सोचें कि भ्रम से क्या समझते हैं तो 'आपना करना' चाहिए कि भ्रम ने हमारा मतलब मनुष्य द्वारा की गई उस मेहनत से रहता है जो किसी धन की उत्पत्ति में लगाई जाती है। भ्रम दो तरह के होते हैं — शारीरिक व मानसिक। कुली, मजदूर, लोहार, बट्टा आदि शारीरिक भ्रम करते हैं लेकिन डाक्टर, वकील, जज, मास्टर वगैरह मानसिक भ्रम करते हैं। कुछ लोग दोनों तरह के भ्रम करते हैं परन्तु अर्थशास्त्र में भ्रम के इस भेद को महत्त्व नहीं दिया जाता। अगर कोई भेद माना जाता है तो वह उत्पादक और अनुत्पादक भ्रम के बीच में होता है। मनुष्य किसी इच्छा की पूर्ति के लिए जो मेहनत करता है वह उत्पादक कहलाती है। उत्पादक और अनुत्पादक मेहनत का साफ करने के लिए मान लीजिए की कोई आदमी बिना मतलब का एक स्थान की मिट्टी खोद कर दूसरे स्थान पर जमा करता है। ऐसा भ्रम अनुत्पादक कहलाएगा। हाँ, अगर पहले स्थान पर मिट्टी का कँचा ढेर लगा हो और दूसरे पर गहड़ा हो तो वह भ्रम उत्पादक गिना जायगा क्योंकि ऐसा करने से गहड़ा पट गया और किसी के उसमें गिर जाने का डर जाता रहा। अस्तु, उत्पादक भ्रम के दो भाग किए जाते हैं। बड़बड़ लकड़ी से हल बनाता है किसान खेल में अनान पैदा करता है और लोहार लोहे से चाकू बनाता है। इस प्रकार का भ्रम प्रत्यक्ष उत्पादक भ्रम कहलाता है। लेकिन जंगली से लकड़ी लाने में जो भ्रम लगता है अथवा पडित्तों को चेंलों को पटाने में जो मेहनत करते हैं वह परोक्ष उत्पादक कहलाता है क्योंकि उनसे किसी वस्तु निरूपण की उत्पत्ति नहीं होती।

भ्रम की उपयोगिता (Utility of labour)

जिस प्रकार सब भूमि ऐसी उत्पादक नहीं होती उसी तरह सब भ्रम एक-दूसरे उत्पादक नहीं होते। भ्रम की उत्पादकता कई बातों के ऊपर निर्भर रहती है। मेहनत करने वाला अगर मजबूत, शिक्षित और ट्रेनिंग पाए हुए

हैं तो उसकी उत्पादक शक्ति अधिक होगी। कार्यक्षमता आदमी को मिलने वाले खाने, उसने रहने के स्थान की आवश्यकता आदि बातों से सम्बंध रखती है, इसके अलावा यदि मजदूर गुनाम की तरह काम करते हैं तो उनका श्रम कम उत्पादक हो जाता है। इसीलिए कारखानों में अच्छे कारागरो और मजदूरों को हिस्सेदार बना लेते हैं। इसी प्रकार खेती में हिस्सेदार होते हैं। अर्थात् गेन में काम करने वालों का हिस्सा रेंध जाना है इसमें काम करने वाले मन लगाकर काम करते हैं और अधिक से अधिक माल उत्पन्न करने का प्रयत्न करते हैं। चतुरता और बुद्धिमानों भी श्रम को और उत्पादक बनाते हैं। एक मामूली बढई जिस लकड़ी से एक भद्दा-सा बक्स बना कर तीन चार रुपये की बेचता है एक चतुर बढई उसी से एक अच्छी आलमारी बना कर बेचने से दस पन्द्रह रुपए प्राप्त कर लेता है। जो श्रमजीवी बुद्धिमान नहीं है, जिन्हें इस बात का ज्ञान नहीं है कि किस प्रकार संपत्ति की वृद्धि करनी चाहिए, उनका श्रम बहुत कम उत्पादक होता है। उदाहरण के लिए इस देश के मूर्ख और कम बुद्धि वाले बढई लोहार, कुम्हार और जुलाहे को ले लीजिए। ये श्रम भी उसी प्रकार काम करते हैं जिस प्रकार हजारों वर्ष पहले हाता था। यदि ये बुद्धिमान् तथा पढे लिखे होते तो दूसरे देशों की बना हुई अच्छी अच्छी चीजों को देख कर ये भी वैसे ही वस्तुएँ बनाने के उपाय सोचते।

श्रम विभाग (Division of Labour)

श्रम की उत्पादकता के संबंध में एक बात और जानने योग्य है। पुराने जमान में आदमी अपनी सारी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए स्वयं ही सब काम करता था। वही भीषड़ी बनाता, वही मछली मारता, वही तीर और धनुष बनाता और वही पहनने के लिए जानवरों को मार कर उनकी राल खींचता। लेकिन समय के परिवर्तन के साथ मनुष्य ने परिवार बना लिया और कई परिवार मिल कर गाँवों में रहने लगे। इसने साथ ही इस बात का रयाल हुआ कि यदि एक आदमी एक ही काम करे तो और भी अच्छा हो। अतएव एक आदमी केवल अन्न पैदा करता है, एक केवल कपड़ा तैयार करता है इत्यादि। इस प्रकार गाँव के किसान, लकड़हारे

और तुनाहे आदि का काम अलग अलग हो जाता है। जैसे जैसे उन्नति हुई एक एक घेसे व कइ कई भाग हां लगे। कपड़ा तैयार करने के लिये एक आदमी केवल कनास पैदा करता है, दूसरा कनास को श्रोतता है अर्थात् रुई से बिनोल अलग करता है, तानरा सूत कातता है और चौथा केवल कपड़ा बुनता है। इस प्रकार इन भागों के भी भाग किये जाते हैं। इस प्रकार से होन वाले भ्रम व घटवारे का भ्रम विभाग कहते हैं। भ्रम विभाग हा जाने से पहले तो कोई आदमी बड़ी जल्दी किसी विभाग का काम सीख सकता है। इसके अनावा भ्रम विभाग के अन्तर्गत एक ही काम करते आदमी खूब होशियार हो जाता है। फिर प्रत्येक विभाग में की जाने वाली क्रियाएँ इतनी सरल हो जाती हैं कि उनके करने के लिये मशीन का मती मति प्रयोग किया जा सकता है। इन सबका नतीजा यह होता है कि किसी वस्तु की उत्पत्ति करने में खर्च कम पड़ने लगता है। परन्तु भ्रम विभाग से कुछ नुकसान भी है। एक ही काम को करते करते यह काम नीरस सा लगने लगता है। उस काम के करने में फिर मन नहीं लगता। यही नहीं यदि वह चाहे कि अब किसी दूसरे के पेशे को अखित्तवार कर ले तो वह एना नहीं कर सकता। तीसरे इसके कारण उसे अपने शरीर के किसी एक अंग का ही अधिक उपयोग करना पड़ता है। फलतः उसका स्वास्थ्य गिर जाता है। कुछ भी हो भ्रम विभाग के कारण अभी भारी और दुःखदायक कामों के करने से बच जाते हैं और उन्हें अब सप्ताह में केवल ४५६० घंटे तक काम करना पड़ता है। बाकी समय वे अपनी शिक्षा, मनोरंजन और उन्नति के लिये लगा सकते हैं।

पूँजी (Capital)

हम कह आए हैं कि किसी वस्तु की उत्पत्ति में धन की भी जरूरत पड़ती है। उत्पत्ति के कार्य में जो धन लगाया जाता है उसे हम पूँजी कहते हैं। नाट करने लायक बात यह है कि सब धन पूँजी नहीं कहलाता। उसका बही हिस्सा पूँजी के नाम से पुकारा जायगा जो और सम्पत्ति पैदा करने के काम में आवेगा। उदाहरण के लिये यदि कोई किसान पैठा पैठा अनाज रत्न करता है लेकिन काम नहीं करता, तो उसका अनाज रूपी धन

पूजा नहीं कहा जा सकता। लेकिन अगर वह खाने के साथ खेती भी करता जाता है तो ज़ा अन्न वह खाता है वह पूँजी स्वरूप है। खेत में बीज बोने के दिन और जब अनाज कट कर किसान के घर में आता है इस बीच में कई महीने गुजर जाते हैं। तब तक किसान का खाने पीने की चाहिये। मजदूरी चाहिये, हल, बैल आदि चाहिये। पहनी को कपड़े, रहने को घर तथा औजार वगैरह भी चाहिये। ये सब चीजें पहले से ही इकट्ठी करनी पड़ती हैं। इनमें अन्न, वस्त्र, बैल बधिया, हल फाल, घर द्वार सब कुञ्च आगया और इन सबकी गिनती पूँजी में करनी चाहिए।

यह स्पष्ट है कि सम्पत्ति पैदा करने के पहले पूँजी लगानी या खर्च करनी पड़ेगी। पूँजी दो तरह से खर्च की जाती है। किसान जो बाज बोने के काम में लाता है वह एक ही बार में खर्च हो जाता है। वह जिस पानी से खेत को सींचता है उसका वह दूसरी बार उपयोग नहीं कर सकता। बटई जिस लकड़ी का हल बनाता है वह फिर उसके काम की नहीं रहती। लोहार जिस लोहे की खुर्ची गटता है वह बिना तोड़े दूसरी चीज बनाने के लिए काम में नहीं लाई जा सकती। कहने का मतलब यह है कि कुछ पूँजी का एक हिस्सा हमेशा के लिये एक दम खर्च हो जाता है। इस हिस्से का चल पूँजी कहते हैं। दूसरी ओर किसान बार बार उर्हा नैलों, हल, पावड़ा, कुदाली, खुर्ची आदि से काम लेता है। बटई चीजें बनाने के लिए खाली, बसना, आरी आदि से काम लेता है। इसी तरह लोहार का हथौडा, घन, धौकनी वगैरह बहुत दिन तक चलते हैं। इन वस्तुओं में खर्च की हुई पूँजी को अचल पूँजी कहते हैं।

पूँजी के उपयोग करने के ढंग पर उसकी उत्पादक शक्ति निर्भर रहती है। यदि बुद्धिमानी के साथ पूँजी लगाई जाती है तो अधिक सम्पत्ति पैदा होगी अन्यथा कम। यदि कोई जमीन बलुई है तो उसमें आप चाहे जितनी खाद डालिए और चाहे जितना पानी दोजिए, गेहूँ की पैदावार कभी अच्छी न होगी। और आपने जो पूँजी उसमें लगाई है उसका आपको पूरा पूरा बदला नहीं मिलेगा। परन्तु उसी पूँजी को अगर आप किसी उपजाऊ जमीन में लगाते तो उसकी उत्पादक शक्ति अवश्य बढ़ जाती। कहने का मतलब

यह कि मनी या व्यापार में जो पूँजी लगाई जाता है, उसके लगाने में यदि बुद्धिमाना, तजुबे और दूरन्देहा से काम लिया जाता है तो पूँजा की उत्पादक शक्ति बढ जाती है।

प्रबन्ध (Management)

जैसा कि पहले कहा जा चुका है आन्तकन व जमाने में भूमि, श्रम और पूँजी व ऊपर प्रबन्ध करने वाले का हाथ रहता है। प्रबन्ध व काय और श्रम में अलग है। श्रमा अधिष्ठान शारीरिक मेहनत करता है और प्रबन्धक को दिमाग में ब्यादा काम लेना पड़ता है। प्रबन्धक उत्पत्ति के लिये सबसे उपयुक्त भूमि को खानकर उस पर आवश्यक चाग्यता वाले मजदूरों को श्रम-विभाग के नियमों के अनुसार लगाता है। उसे नए नए लाभदायक श्रोतारों को इकट्ठा करना पड़ता है। वह समय व शिवाय में बच्चे माल को सस्ते से सस्ते दामों में खरीदता है। बाजार में लोगों का बलि के मुताबिक माल बनवा कर वह उस माल का अच्छे से अच्छे दामों में बेचता है। कहने का मतलब यह की प्रबन्धकता लोगों की बलि का खान खबर, भूमि, श्रम और पूँजी का इस हिसाब और रूप में लगाता है कि कम से कम लागत में अधिक से अधिक बस्तु तैयार हो जानी है और इसको वह सबसे अधिक मुनाफ के हिसाब में बाजार में बेच देता है।

इसम शक नहीं कि जो मनुष्य प्रबन्ध करता है। उसमें जून से गुण्य होने चाहिए। वह पढा लिखा हो, हाथियार हो, दूरन्देहा हो, लोगों में मिला जुनता हो। बाजार व भाव व लोगों की बदला हूइ चाह से याकूज रहे तथा ऐसा विचित्र फैशन का माल तैयार करावे जिसमें मनुष्य उस माल का सबसे अधिक मात्रा में खच दें। प्रबन्धकता आज कल के बनबेसिंग व तरीकों स जानकारी रखता है और उपयोगी तराये से अपने माल का विज्ञापन छपाता है। इसके अतिरिक्त वह अपने माल को देशो और विदेशा बाजारों में पहुँचाने के लिए सजने सस्ते और शीघ्र पहुँचाने वाली सजारा का प्रबन्ध करता है। प्रबन्धक का एक उत्पश्य रहता है कि सजम कम चला में मज से अधिक लाभ करते रहना। यदि किसी मशोन का प्रयोग करने से

खर्च में कमी होती है तो वह मजदूरों का खर्चा किये बिना ही मजदूरों को घटा कर उस मशीन को कारखाने में मँगावेगा।

साहस या जोखिम (Enterprise)

मान लो उत्पत्ति के उपरोक्त चारों साधन भीजूर हैं परन्तु सबको हम बात का शक है कि कार्य शुरू कर देने के बाद उनकी भूमि का लगान, भ्रम की मजदूरी, पँची पर सूद व प्रबंधक का वेतन मिलेगा या नहीं। ऐसी हालत में उस समय तक उत्पत्ति का कार्य शुरू ही नहीं हो सकता जब तक कोई व्यक्ति साहस न करले सबको इस बात का विश्वास न दिला दे कि काम अस्त पन्न हो जाने पर भी वह लगान, मजदूरी, वेतन, सूद आदि चुकता कर देगा। लेकिन खाली विश्वासवाना हाने से काम नहीं चलता। विश्वास दिलाने वाले की हालत ऐसी होनी चाहिए जिससे सब लोग उसकी बातों का विश्वास कर लें। इसके लिए यह बहुत जरूरी है कि विश्वास दिलाने वाला साहसी मनुष्य धन तथा अपनी बात दानों का धनी हो। इसके अलावा साहसी को बुद्धिमान तथा दक्ष होना चाहिए, जिसमें वह योग्य सहायक व प्रबंधक को ढूँढ सके। यह तो हुए साहसी के गुण। अब देखना चाहिए कि साहसी और उत्पत्ति में हाथ पगने वाले अन्य व्यक्तियों में कोई भिन्नता है या नहीं। सबसे बड़ा पकड़ यह है भूमि के मानिक का लगान, भ्रमिक की मजदूरी, महाजन का सूद और प्रबंधक का वेतन बँधा हुआ हाता है लेकिन साहसी को आने वाली रकम में यह सब काट कर जो बचता है उसी से सतोप करना पड़ता है। यदि कुछ कमी पन्ती है, तो उसे खय अपनी गॉट से लगाना पड़ता है। यह सब ठीक है लेकिन तिस पर भी किसी मनुष्य या कम्पनी को साहस का बाड़ा उठाना ही पड़ना है। क्योंकि बिना साहस के न कोई व्यापार चालू किया जा सकता है और न चालू व्यापार बटाया ही जा सकता है।

अभ्यास व प्रश्न

१—उदाहरणों सहित समझाइये कि स्थान परिवर्तन से उपयोगिता की वृद्धि किस प्रकार होती है ?

२—दुकानदार और शायरी वस्तुओं की उपयोगिता, वृद्धि किस प्रकार करते हैं ?

३—समय परिवर्तन ने उपयोगिता वृद्धि के उदाहरण दायिये ।

४—क्या किमी वस्तु के विशारन से भी उपयोगिता की वृद्धि होता है ?

५—क्या कोई ऐसी वस्तु है जिसके अधिक उपयोग करने से उसकी उपयोगिता की वृद्धि होती है ?

६—यह समझाइये कि निम्नलिखित व्यवसायों में उत्पत्ति के साधनों का किस प्रकार उपयोग किया गया है —

हलवाई का दुकान, कपड़े की दुकान, सूत काता, कपड़े बुनना, गीराना

७—श्रम और मनोरजन का अन्तर समझाइये । यदि कोई व्यक्ति कविता करता है या गाता है तो उसका कविता करना था गाना श्रम कहलायेगा या मनोरजन ?

८—उत्पादक और अनुत्पादक श्रम के भेद बतलाइये । यदि कोई विद्यार्थी परिश्रम करने पर भी अपनी परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाता है, तो उसका श्रम उत्पादक कहलायेगा या अनुत्पादक ?

९—पडा, ज़मींदार, डाक्टर, पुरोहित, साधु, सिपाही इत्यादि के श्रम किन दशाओं में उत्पादक माने जा सकते हैं ?

१०—भारतीय मज़दूरों की कायस्थता किस प्रकार उठाई जा सकती है ?

११—अभशास्त्र की दृष्टि से भूमि की विशेषताएँ तथा महत्व समझाइये ।

१२—क्या आप के गाँव में भूमि किसानों की काफी परिमाण में मिल जाती है ? यदि नहीं तो कमी के प्रधान कारण क्या हैं ?

१३—चल और अचल पूँजी के भेद समझाइये । निम्नलिखित उद्योग-धर्मों की चल और अचल पूँजी लिखिये —

गन् की खेती, कपास का कारखाना, मिठाई बनाना, सिन्धीने बनाना ।

१४—प्रवर्धन के कार्य का महत्व समझाइये । उसमें किन गुणों की आवश्यकता है ?

१५—उत्पत्ति में जोखिम का क्या स्थान है ? निम्नलिखित व्यवसायों में जोखिम कौन उठाता है —

पटाई पर की जाने वाली खेती, मिश्रित पूँजा वाला कंपनी, कपड़े का कारखाना, चीना का कारखाना ।

१६—उत्पत्ति के अर्थ समझाइये । उत्पत्ति के साधन बताइये । गाय के उद्योग वर्षों में इन साधनों के मन्स्व की तुलना कीजिए ।

चौथा अध्याय

भारतीय गाँवों की खास पैदावारें

पिछले अध्याय में हम यह देना चुके कि उत्पत्ति करने में किन किन शक्तियों से काम लेना पड़ता है । अब इन शक्तियों के सहयोग से उत्पन्न होने वाली वस्तुओं के बारे में कुछ जानना आवश्यक मालूम पड़ता है । भारत में नब्बे प्रतिशत से अधिक लोग गाँवों में रहते हैं और मत्त प्रदिशत से ऊपर मनुष्य खेती करके अपना पेट पालते हैं । अस्तु, या, रत के उपज के बारे में ही पहले कुछ विचार जाय तो अनुचित न होगा । भारत में अधिकतर दो फसलें होती हैं । एक खरीफ कहलाती है और दूसरी रबी । खरीफ की फसल जेठ मास में लेकर कार्तिक तक चलता है और बाकी छि महीनों में अर्थात् कार्तिक से वैशाख तक रबी का फसल होती है ।

सयुक्त प्रांत के इलाहाबाद जिले में खरीफ का फसल होने के पहले खेत में खाद डाल देते हैं । पानी बरसन के बाद खेत एक बार जोत दिया जाता है । खरीफ की फसल में वहाँ ग्वार, बाजरा, मक्का, साग और कीदो, चावल, अरहर, मूँग, उरद, जल के तिली बोई जाती है । मक्का और प्यार के लिए खेत अक्सर दो बार जाते पाते हैं । बाचरे के लिए एक ही बारें हल चलाने से काम निकल जाता है । प्यार और मक्का को ता किमान कूटी बनाकर बोते हैं । बाजरा, उरद और मूँग के बीज को बसेर कर बोते हैं । जब बपा नहीं होता तब खरीफ में एक दो बार खेतों को साँचन की जरूरत पड़ती है और नहीं तो खरीफ की फसल के लिए मिच्छाई, काई खाम जरूरी नहीं है । अरहर रबी की फसल के साथ वैशाख में काटा जाती है, बाकी सब चाँगे भादा और कुआर में काट ला जाती है । रबी की फसल

में गेहूँ, चना, जौ, मटर, मसूर, अलसी, मरसों, गन्ना और ऊपर बोया जाता है। जिन क्षेत्रों में गेहूँ, जौ, मरसों इत्यादि चीजें बोई जाती हैं उनमें खरीक की फसल नहीं पैदा की जाती बल्कि उन क्षेत्रों को एक बार जोत कर परसात के पहले छाड़ देते हैं। परसात में उनमें सूख पानी भरता है। गेहूँ वगैरह बोने के पहले फिर ये क्षेत्र दो बार जोत दिए जाते हैं। खरी में चना, मटर को तो बखेर कर बात है बाकी सब अनाज कुड़ी द्वारा बोए जाते हैं। खरी की सब फसलें त्रैशाल्व व अगीर तक कट जाती हैं। अस्तु इस प्रकार से हाहाबाद जिले में पैदा होने वाले अनाजों में चावल, गेहूँ, चना, ज्वार, बाजरा, जौ, मकई मुख्य है। दालों में मूग, उड़द, अरहर, मटर, मसूर आदि पैदा होता है। तेलहन की वस्तुओं में तिल, मरसों, व अलसी प्रधान हैं। इसके अलावा गन्ना और शालू की खेती होती है।

भारतीय भूमि की पैदावार की कमी

हाहाबाद जिले में जो उपज पैदा होती है, उनमें मक्का, मसाला, कपास, जूट, सन, चाय, तमाखू व पशुओं के चार का नाम जोड़ दिया जाय तो भारत की सारी मुख्य उपज गिनती में आ जाती है। खेती से उत्पन्न पैदायों की दृष्टि से हिन्दुस्तान सभार भर में तसरा गिना जाता है। सभार भर की सन की माग तो भारत ही पूरी करना है लेकिन गेहूँ, कपास, चावल आदि की पैदावार में ना यह अछा स्थान रखता है। लेकिन यहाँ व निवासियों की आवश्यकताओं का ध्यान में रखकर सोचने से यहाँ की उपज कम मालूम पड़ता है। यदा नहीं, तुलना करने से पता चलता है कि प्रति एकड़ हम जितना गेहूँ, जौ, कपास, आदि की उत्पत्ति करते हैं उतनी ही जमीन में उससे कई गुना उपज अमेरिका और रूसवाले पैदा करते हैं। हमारे यहाँ की एकड़ जितना गेहूँ पैदा होता है उसका चौगुना अमेरिका में और इसमें भी अधिक रूस में पैदा किया जाता है क्योंकि वहाँ पर तो मील मील दो दो मील व खेतों में खेती की जाती है। इस प्रकार हमारे यहाँ से आठ स दस गुना और बाढया गन्ना जोना और हवाई द्वीप में उगाया जाता है। हमारे यहाँ की रुद्ध की खेती से भी अधिक माल अमेरिका वाले पैदा कर लेते हैं। चाहे जो उपज ले लीजिए हर एक में हम और देखें से

गिद्धड़े हुए पाये जाते हैं। यह बात नहीं कि हमसे भी पिछड़े हुए देश नहीं हैं लेकिन ऐसे देश अभी ताजे ताजे दूँद निकाले गए हैं अथवा यहाँ भारत की तरह की उपजाऊ ज़मीन नहीं है। और हमें तो अपने यहाँ की तुलना उन देशों में करनी चाहिए जो हमारी ही तरह के हैं।

पैदावार की कमी के कारण

समझान प्रश्न उठता है कि अक्सर किस कारण से भारत में और देशों की अपेक्षा उपज इतनी कम होती है। यह हम जानते हैं कि गतों में उत्तम खाद देनी चाहिए, अच्छे बीज बोने चाहिए, उत्तम औजारों से खेत की जोतना बोना चाहिये तथा खेत की सिंचाई का पूरा प्रबन्ध रखना चाहिए। हमारे किसानों को पहले तो पर्याप्त खाद मिलती नहीं। यह कुछ आम रिवाज सा हो गया है कि गोबर की उपली पाय दी जाती है। ये उपली या कड़े ईंधन की जगह चलाने के काम में लाए जाते हैं। यदि इस गोबर से उपली पायने की जगह खाद बनाई जाए तो बहुत अधिक फायदा हो। इससे अलावा खाद डालने के पहले किसान खाद को खेत में पहले से ढेरी लगा कर धूर में छोने देते हैं जिससे खाद का बहुत सा तत्व नष्ट हो जाता है। खाद के अलावा किसान जिन बीजों को बोते हैं वे स्वस्थ और अच्छी हालत में नहीं होते। फलस्वरूप उपज कम होती है। फिर किसान के बैल और औजारों का ही लाजिए। बैल मरियल तथा रोगी होते हैं, उनसे खूब कष्टकर काम नहीं लिया जा सकता। इसी प्रकार कहीं भारी हलों से काम लिया जाता है तो कहीं हल्के हल से। इसके अलावा हल में खेत खोदने के लिए जो लोहे का फल लगा रहता है यह कहीं आधक नुकीला होता है और कहीं साधारण। सबसे बड़ी सुराह तो यह है कि हमारे हल ज्यादा गहराई तक नहीं खोद सकते और न मिट्टी का ही अच्छी तरह फलट सकते हैं। इसलिये जो पौधे उगते हैं उन्हें ऊपर की ही सतह से अपनी मूगक पौंचनी पड़ती है। नीचे की जमीन ऐसी ही पड़ी रहती है। इससे भी पैदावार अच्छी नहीं होती है। यदि घटिया और उत्तम ढग के हलों से काम लिया जाय तो खेत अधिक गहरे रोदे जा सकते हैं। ऐसा करने से नीचे की बलिया मिट्टी ऊपर आ जायगा और पैदावार अच्छी हो सकती है।

पानी करने के काम में सिंचाई का स्थान भी काफी ऊँचा है। लेकिन हमारे देश के कितने भागों में तो सिंचाई के प्यात साधन ही नहीं हैं। हमारे अत्युक्त प्रांत में नहरों का इतना जाल है। नहरों में आबपायी करने के लिए किसानों को मेत के हिमाचल में दाम चुकाने पड़ते हैं। यहाँ पर पानी का बड़ा नुकसान होता है पहले किसान खेतों में पानी पहुँचाने के लिए जो नाजिरिया बनाते हैं वे इतनी घुरी हालत में होती हैं कि पानी फूट-फूट कर बाहर निकल जाता है। मेता में क्या रखा नहीं बनाई जाती तथा सिंचाई ठीक तरह में नहीं जाती है। चूंकि नहर से आबपायी करने की कीमत का पानी के परिमाण में कोई सम्बन्ध नहीं रहता इसलिए जल्द से जल्द पानी मेता में दिया जाता है जिससे मेता का फसल का बड़ा धक्का पहुँचता है। जिस प्रकार कम सिंचाई में पानी को धक्का पहुँचता है वैसे ही अधिक सिंचाई में भी उपर खराब हो जाती है। यदि उचित परिमाण में थोड़ी-कम सिंचाई की जाय तो फसल बहुत अच्छी होवे। और यह जल्द ही कि किसान इस बात का ज्ञान प्राप्त करें कि किस फसल के लिए कितने पानी की जरूरत है।

जिस तरह में मनुष्य बिना आराम किए लगातार काम नहीं कर सकता उसी प्रकार जमीनों में भी लगातार बीते ही फसल नहीं देना ही जा सकती। प्रायः जब एक फसल पैदा हो चुकती है तो जमीन में कुछ तत्वों की कमी पड़ जाता है। इस कमी को पूरा करने के लिए समय का आवश्यकता होती है अर्थात् फौरन ही यह कमी ठीक नहीं की जा सकती। इसलिए कितने ही एक फसल के बाद उस खेत में कुछ नहीं बोते अर्थात् उसे परती छोड़ देते हैं। ऐसा करने से कुछ महीने में जमीन उन पदार्थों को, जो उससे निकल जाते हैं, वायु मण्डल द्वारा फिर से खींच कर जमा कर लेती है। यह कार्य तो ठीक है लेकिन इससे जमीन बरत/पका रहती है। दूसरे मूमि का केवल परती छोड़ देने से ही खोप हुए मत्र तत्व वाप नहीं आ जाते। अगर खाद दी जाय तो इन तत्वों की उचित पूर्ति हो सकती है। खाद देने का उचित तरीका तो यह होगा की परती छोड़ा हुआ मूमि में बराबर दूरा पर कुछ डेढ़ फुट गहरे गड्ढे खोद कर उनमें कृष्ण-कवट-गोबर भर भर कर

उ हें टक देवे ! इससे साल भर में खाद उन कर जमीन में मिल जायगी । लेकिन अब तो विज्ञान के धुरंधर विद्वानों ने यह टूट निकाला है कि किस फसल के बाद कौन कौन से तत्व नष्ट हो जाते हैं । इसका सम्बन्ध फसलों के हेर फर से जोड़ा जा सकता है । प्रायः किमान फसलों को हेर फर से बचाने हैं लोकन वे उग्रोक्त यथाप सिद्धांत को अच्छी तरह से नहीं समझते । किसी फसल के बाद जमीन के सब तत्व तो निकल ही नहीं जाते और न हर एक फसल से वहां तत्व नष्ट होते हैं । इसलिए अगर किसी फसल के बाद ऐसी फसल बोई जाए जिसमें उनी तत्वों को जरूरत पड़े जो कि अभी जमीन में मौजूद हैं तो यह न अच्छा हो । चूंकि खोए हुए तत्वों से अब हमारा कोई मतलब नहीं रहता इसलिये जमीन उनको अच्छी तरह से वायु मंडल के द्वारा खींच सकती है इससे तीसरी बार हम फिर से पुराना फसल को बो सकेंगे ।

उदाहरण के लिये मकई के बाद गेहूँ, ज्वार के बाद चने, मसूर, मटर वा अलसी, कपास के बाद मकई बोई जा सकती है । गेहूँ के साथ साथ दालें या तेनहन वस्तुएं बाई जा सकती हैं ।

उम्र में कमी होने का दूसरा कारण है किसानों में शिक्षा का अभाव इसके अलावा वे निर्धन हैं । अतएव अच्छी बातों के ऊपर खर्च नहीं कर सकते । पैसा हो भी तो क्या करें ! बिना उपयुक्त शिक्षा पाए वह अच्छी तरह व्यवस्था नहीं कर सकता । यदि किमान पत्र लिखा हो तो उसे यह भली भाँति समझाया जा सकता है कि कैसे खाद हानो चाहिये, कैसे फसलों के हेर फर से परती भूमि छोड़ने की आवश्यकता बताई जा सकती है या अधिक पानी डालने से कौन से मुकसान होने हैं ।

खेतों का छोटे छोटे और दूर-दूर होना

(Fragmentation of Land Holdings)

इन सुगमियों के अलावा एक और कमी है । भारतभर में बहुत से खेतों का क्षेत्रफल एक एक दोन्दा एकड़ भी नहीं है । कितने किसानों के खेत इससे भी छोटे होते हैं । किसी किसी का क्षेत्रफल तो आधा ही एकड़ होता है । अथवा इससे भी कम । इसके अलावा अनेक किसानों के पास बहुत से

खेत होते हैं। लेकिन वह दूर दूर होते हैं। इससे किसानों को बहुत हानि होती है। छोटे खेतों में अच्छे अच्छे हलो और औजारों से काम नहीं लिया जा सकता। हलो को खेत में घुमाने में ही बहुत सी भूमि बेकार चली जाती है। इन सब बातों से किसानों में लड़ाई भगड़ा गुर होता है और आए दिन अदालत न दखन किए जाते हैं। ऊपर इस बात का निम्न आया है कि खेतों का दूर दूर होना बुरा है। खेतों के एक जगह न होने के कारण एक खेत से दूसरे खेत में पानी ले जाने में बहुत सा समय व्यर्थ जाता है। जोनाइ-बागाइ के अवसर पर दो चार घंटे की देर होने से ही नुकसान का डर रहता है। फिर सिंचाई के समय एक ही समय में सर खेतों में पानी नहीं दिया जा सकता। अगर कहीं नहरों से पानी लेकर कोई किसान अपने खेत सींचता है तो नहर से पानी लाने में उड़ा खर्च और श्रमुविधा पड़ती है। यदि खेत एक जगह ही और कुएँ से सिंचाई की जाय तो एक ही बार में सब जगह पानी पहुँच जाय। खेतों के दूर रहने से एक ही कुआँ काम नहीं देता और दूर दूर से पानी लाने में बड़ा कठिनाई पड़ती है। फिर यह सबको मालूम है कि जब फसल तैयार होने लगती है तो उसकी रखवाली की बड़ा जरूरत पड़ती है। यदि रखवाली न हो जाय तो चिड़ियाँ, तोते, गाय, बकरी चंगूरह पशु और पक्षी खेत को साफ कर दें। लेकिन अगर किसान का कोई खेत गौँ के इस कोने पर है और कोई उस कोने पर तो रखवाली ठाक तौर पर नहीं की जा सकती। खेतों के एक जगह होने से एक ही आदमी मारे खेत की देख रेख कर सकता है और बहुत से रखवालों का आवश्यकता नहीं पड़ती तथा पैदावार के मारे जान का डर भी कम हो जाता है।

इसके अलावा खेत पास ही तो एक ही आदमी खेतों के बहुत काम समाल लेवे। हवादे आदि काम करते रहते हैं, अकला आदमी सब देखभाल कर लेता है। दूर दूर खेत होने से नीकर ठीक काम नहीं करते और अकेला आदमी सब जगह समय से ठाक देख नहीं पाता है। इससे खर्च भी अधिक हो जाता है और पैदावार की भी हानि-होती है। फिर दूर दूर की दौड़ धूप में शरीर को भी कष्ट होता है। एक जगह खेत होने से शरीर को

मी आराम मिलता है। आदमी ही नहीं बैलों को भी आराम मिलता तथा कटाई, ढोलाई इत्यादि में भी आसानी रहती है। और आराम में दूसरे किसानों से होने वाली लड़ाइयों भा कम हो जाती हैं।

ऊपर कहे बुराइयों का कारण यह जरूरी है कि ये हानियाँ दूर की जायें इसका साधा सा उपाय यह है कि हरेक गाँव में या कई गाँवों में मिलाकर सब खेतों का मूल्य अंदाजा जाय और एक किसान के खेतों का नितना मूल्य हो उतने उतने मूल्य का खेत एक स्थान में एक चक्र में कर दिए जायें और मविष्य के लिये उनका छोटे छोटे टुकड़ों में बाँटा जाना बंद कर दिया जाय। जहाँ एक ही परिवार के दो तीन आदमियों के पास कई छोटे छोटे खेत हों, वहाँ पर बेहतर होगा यदि उनमें समझौता करा कर वे खेत एक ही आदमी को दीजना दिए जायें। दूसरे आदमियों को उनके हिस्से का रुपया मिल जायगा। कई जगह ऐसा प्रयत्न सफलतापूर्वक किया जा चुका है और दूसरी जगह भी ऐसा ही उपाय किया जा सकता है। सहकारी समितियों द्वारा खेतों की चक्रबंदी वैसी की जा सकता है यह किसी अगले अध्याय में बतलाया जायगा।

गाँवों में बहुत से किसान ऐसे हैं जिन्होंने पास सब खेतों का क्षेत्रफल इतना कम है कि यदि वे चक्रबंदी द्वारा एक चक्र में भी कर लिये जायें तो भी गेहों से हानि होना निश्चित है। जिन किसानों के पास तीन चार एकड़ में कम क्षेत्रफल के खेत हैं उनको खेती से इतनी आमदनी नहीं हो सकती कि वे उसमें अपने कुटुंब का जीवन निवाह कर सकें। ऐसे किसानों की सख्या प्रत्येक गाँव में काफी अधिक रहती है। इनकी दशा तो तब ही सुधर सकती है जब गाँव के सब किसान मिलकर एक सहकारी समिति बना लें और सामूहिक रूप से खेती करें। इस प्रकार की सहकारी समिति का गठन कैसे किया जा सकता है, यह किसी अगले अध्याय में बतलाया जायगा।

खेती में क्या करना पड़ता है ?

आप कि-दोस्तान के खेतों की खास फसलें, उनके कम होने के कारण और इन कारणों को दूर करने के उपाय को जान गए। अब हम आपको

सक्षर में मद्द भो पना देना चाहते हैं कि आखिर रातो करने के लिए करना क्या क्या पड़ता है अथवा, भारत के किसान किस प्रकार खेती करते हैं। यह हम गुरु में ही बता चुके हैं कि भारत में अधिकतर दो फसलें होती हैं। एक खरीफ की फसल कदलाना है और दूसरी रबी की। पहली बरसात के शुरू से चल कर दिवाली तक जाती है और दूसरी दिवाली से हालांकि तक में खेती होना है। अगु, वर्षा आरम्भ होने से पहले किसान खेत में जगह जगह खाद की ढेरियाँ लगा देता है। फिर जब पानी दा तीन दिन बरस कर रुक जाता है तब फौन खेत का जात दिया जाता है और खाद को पावड़े से पैना कर पटना चला कर खेत बराबर कर देते हैं। इससे बाज मिट्टी में दब जात है और निद्रिया इन्हें चुग नहीं सकती। आषाढ की फसल पानी बरसने के चार-पाँच दिन में ही बो दा जाती है ताकि बो जमीन एल न जाय अथवा पानी फिर बरसने लग। इस फसल में मक्का, यात्रा, कपास, उरद, मू ग, अरहर, अड़ो, तिल, मस, धान इत्यादि चीजें बोई जाती हैं। मक्का व ज्वार के खेत अकसर दो बार जोते जाते हैं। कपास का बीज बोने क पहले खेत तीन बार जोना जाता है। अथ फसल बोने के पहले एक दो बार जोतकर खेतों को छोड़ देते हैं। रबी का फसल में बीज बोने से पहले खेतों को दो तीन बार जोतना और उन पर पाटा चलाना पड़ता है। रबी में गहूँ, जौ, चना, मटर, सासों, अलसी इत्यादि चीजें बोई जाती हैं। बीज बोने के दो सप्ताह हैं। कुछ फसलों के बीज हाथ से खेत में छितरा कर फेंके जाते हैं जैसे बाजरा, उरद, मू ग, चना, मटर आदि के बीज। मक्का, पवार, कपास आदि के बीज कूँडों के जरिए या नली के जरिए रोए जाते हैं। कूँड की बोवाई में हल के द्वारा जो कूँड छुदता जाता है, उसमें एक आदमी दाना छोड़ता जाता है। नली की बोवाई में हल के पाछे एक लम्बा पनाली दार बॉस बधा रहता है। एक आदमी हल चलाता जाता है और दूसरा पोले बॉस में दाने छाड़ता चलता है तिन खेतों की मिट्टी भुरभुरी होती है उसमें कूँड की बोवाई की जाती है। जिस जमीन में नीचे नमी और ऊपर खुश्का होता है उसमें नली की बोवाई होनी है।

बोवाई क बाद सिंचाई की बारी आती है। अगर पौधों को पानी न मिले

तो वे सूख जाय और उरज मारी जाय। यों तो खरीफ की फसल में सिंचाई की जरूरत नहीं पड़ता क्योंकि बोवाई के बाद कई महीन तक बरमात होती है। लेकिन जिन गां बया नहीं होती उस बार खरीफ की फसल में और खरीफ की फसल में तो हमेशा ही सिंचाई करनी होती है। जहाँ नदियाँ हैं वहाँ पर तो सिंचाई के लिए नहरें खोद दी गई हैं। लेकिन सब जगह तो नदियाँ होती नहीं। वहाँ पर अधिकतर कुओं से सिंचाई की जाती है। मोट द्वारा कुओं से पानी निकालते तो सब ने देखा होगा। इसमें चमड़े का बड़ा डोना होना है जो कुएँ में रस्मी बाँध कर डाला जाता है। इस मोट को कुएँ से खींचने का काम बैनो से लिया जाता है। एक आदमी बैनो को हाँकता हुआ दूर तक ले जाता है जिससे मोट ऊपर लिच आता है। एक दूसरा आदमी कुएँ पर रहता है जो मोट के ऊपर आ जाने पर उसमें से पानी उड़ेल लेता है। पानी नानियों के द्वारा खेत में पहुँचा जाता है। जहाँ किसी तालाब से किसी ऊँचे खेत में पानी पहुँचाना होता है, वहाँ दो आदमी एक दीरी में पानी भर कर ऊपर फेंकते हैं, वही कहीं रहट से सिंचाई होती है। इसमें एक चरली खम्भों के सहारे कुएँ की जगह पर लगाई जाती है। चरली पर बँबी हुई एक रस्सी में बहुत से डोल प्रथे रहते हैं। एक डाल भर कर ऊपर आता है तो दूसरा कुएँ में जाता है। इसमें एक ही आदमी बैन हाँकने को रहता है।

सिंचाई के अलावा किसान को खुर्राँ से पौधों के आसपास उगने वाली घास को खोदकर फेंकना पड़ता है। इसको निराई कहते हैं। यदि ऐसा न किया जाय तो फसल के पौधों का खाना घास बगैरह बग ले क्योंकि वह भी पौधों की तरह जमीन से खाना लेती है। बरसात में तो बड़ी जल्दी घास फूस जम जाती है। इसलिए किसान दस पंद्रह दिन में निराई करता है। रबी की फसल में निराई की कम जरूरत पड़ती है।

जब फसल के रान पक कर तैयार हो जाते हैं तो किसान हँसिया में काट कर गेहूँ,चना आदि खलिदान में ले आता है। खलिदान उम लिपी पुती जगह को कहते हैं, जहाँ फसल साफ की जाती है। फसल के ऊपर बैन चला कर पहले पौधों को माड़ा जाता है जिससे भूसा और अनाज के दाने अलग हो जाय। माड़ने के पश्चात् हवा चलने पर उड़ौनी की जाती

है। एक ऊरी निवाइ पर से दूरी में भरकर माड़े हुए अनाज को नीचे गिराते हैं जिससे हलका होने व कारण उड़कर भुव दात्रे में अलग हो गिरती है। इसन बाद किसान अनाज और भुव को अगो घर ढो ले जाता है।

ग्रामीण उद्योग-धंधे

खेती के सम्बन्ध में हमन और सब चीजों पर विचार कर लिया, परन्तु यह नहीं गना कि खेती करन में किसान बारहों महाने काम करता रहता है अथवा उमे कभी गाला ना देटना पता है। भारत में किसानों को ग्राम तौर पर चार महाने न लेकर छै तह बहार रहना पड़ता है। दूबरे महाने में तो उगका किमी तरह काम चल जाता है पर तु बेकारो व समय के लिये वे कुछ बचा कर नहीं रख सकते। अत उ ह किमी ऐसे उद्योग धंधे का आवश्यकता रहती है ना या तो खनी करन में सहायता पहुँचावे अथवा जो खेती पर निभर हों। उद्योग धंधे न तो ऐसे हाने चाहिये कि उन्हें छोड़ देने पर उनमें लगी हुई पूँजी जकड़ा पड़ी रहे और न ऐसे हाने जिनमें किसान प्रकार की विशेष शिक्षा का जरूरत पड़े, उद्योग-धंधे ऐसे होने चाहिये जो मौक मोके पर चालू किये जा सकें जैसे चत्वा कातना, लकड़ी व मिट्टी के लिजीने बनाना, तार के पिन्डे बनाना, सामुन बनाना, हाथ का कागज राना, चायन कूटना, गुड़ बनाना, दाल दलना इत्यादि। इस दृष्टि से किसानों के लिए एक मुफ्त उद्योग पशुपालन का है। गाय भैंस पालने से न केवल दूध पी-दही का व्यापार हाता है, बल्कि साथ ही साथ गाय भैंस व बच्चों खेती के काम में आते हैं और गाय का गोबर और मूत्र खाद के काम आता है। बकरी भा पाना ना सकता है। बकरी का दूध पी लिया जाय और बकरे उकरी बेचे जाय। कारमौर, पनाब, राजपूताना तथा अन्य ठहो जगहों में भेड पालने तथा उन उत्पादन का काम किया जा सकता है। मुर्गा पालन और बच्चे तथा गधे बेचने का काम भी अच्छा है।

खेती के साथ में कम खर्च व गाय एक छोटा सा बग़ाचा लगाया जा सकता है जिसमें तरकारी, भाजी या फल-फूल पैदा किये जा सकते हैं। यदि किसान बरखा को न देख सके तो वह बाग को ठेक पर उठा सकता है। यदि गुलाब के फूल लगाए जायें तो गुलाब रस और गुलाब द बनाना बहुत

नहीं हाना चाहिये । शहद की मकड़ी को पाल कर शहद उत्पन्न किया जा सकता है । शहतूत के वृक्ष लगा कर रेशम के कीड़े पाले जा सकते हैं । अड़ो की पैदावार वाले प्रदेश में अड़ो के कीड़े पाले जा सकते हैं । इनमें प्राप्त रेशम भी बेचा जा सकता है और उससे धागे भी बुने जा सकते हैं । रोती के अत्याम्य जमोन पर पेड़ लगा देने से लकड़ी मिल सकती है । इसके अलावा किसान रस्ती बटाने, टोकरी बनाने, चटाई बुनने, पत्ता बुनने आदि का काम भी बखूबी कर सकते हैं । अगर गाँवों में विजली पहुँच जाय और उम्बुच्छ छाटो मात्रा के उद्योग धंधे खोल दिए जाय तो किसान अपने बेकारी के समय में इन धंधों में भी काम कर सकता है । अगर उह कुछ शिक्षा तथा सहायता व सलाह मिले तो वे स्वयं भी मिलकर ऐसे धंधे कर सकते हैं ।

अगर हमने केवल सक्षेप में यह बताया है कि किसान अपनी बेकारी के दिनों में कौन से काम कर सकता है । अगले अध्याय में हम इन धंधों तथा जूता बनाने का काम, लकड़ी के काम, लोहे के काम, मिट्टी के बर्तन बनाने के धंधे आदि के बारे में और खुलकर बतायेंगे ।

अभ्यास के प्रश्न

१—शहर में रहने वाले अपने एक मित्र का पत्र लिखो और उसमें अपने गाँव की खरीफ की फसलों का बणन करो ।

२—तुम्हारे गाँव में इस वर्ष रबी की कौन सी फसलें कितने रकबों में बाई गई हैं ? अपना उत्तर देने में पटवारी के कामजो से सहायता ले सकते हो ।

३—तुम्हारे गाँव में इस वर्ष गेहूँ की सबसे अच्छी फसल किस किसान के खेत में हुई ? उस किसान से यह जानने का प्रयत्न करो कि एक एकड़ में कितना गेहूँ इस वर्ष उत्पन्न हुआ ।

४—तुम्हारे गाँव में इस वर्ष गेहूँ की सबसे खराब फसल किस किसान के खेत में हुई ? उसकी फसल खराब हान व नशे कारण थे ?

५—तुम्हारे गाँव में जिन हल का उपयोग किया जाता है उसका सचित्र बणन करो । ये हल कितनी गहराई तक जमीन खोदते हैं ?

६—गहरा जोताइ व लाभ समभाइय और य प्रतनाइय कि आरक गाँव में कौन न नए हन का उपयोग विशय रूप में लाभदायक होगा ।

७—अरक गाँव के सिचाइ के तराफों का बखन कायय । उनमें किन मुषरों की आवश्यकता है ?

८—गारक का ग्याद का महत्व समभाइये । गोबर की उपना बताकर बना देने में जा हानियें हा रही हैं, उनको बतलाइये ।

९—आरक गाँव में फसलों का हरफर किस प्रकार का जाता है ? इस प्रया में क्या कोइ मुषार की आवश्यकता है ?

१०—खेतों व दूर-दूर पर छोटे छोटे टुकड़ों में बटे हुए दाने से जो हानियाँ होती हैं उनका दिग्दर्शन कीजिये ।

११—आरके गाँव में सब से उहे खेत का रक्षा और सबसे छूटे खेत का रक्षा कीजिये । साधारणत कितन एकड़ रकम व गत आरक गाँव में अधिक है ?

१२—अरके गाँव में ऐसे किसानों का पता लगाइये जिनक पाम व एकड़ से कम रकम के खेत हो ? उनकी एक बष की आमदनी का पता लगाइये और यह जानन का प्रयत्न कीजिये कि वे अपना जीवन निवाह बराबर कर पाते हैं या नहीं ?

१३—आरके गाँव व किसान उत्तम रोज प्राप्त करने व लिय किम प्रकार और कितना प्रयत्न करत हैं ? यदि सब किसान उत्तम बाज जाने लगें ता आरक गाँव की फसलों का उपन में किनो वृद्धि हो सकती है ?

१४—अरके गाँव की किसी फसल की मंडाई का बखन कीजिये ।

१५—आरक गाँव में कृषि की दशा क्यों रराव है ? उस मुषारने व लिये आर क्या उगार करेंगे ?

१६—आरक गाँव के किसान प्रति बष साधारणतया कितने दिन बेकर रहत हैं ? इन दिनों में क्या काम करतें हैं ?

१७—अरके गाँव के घरेलू उद्योग बर्बा का बखन कीजिये । गाँव वालों के लिए उनका क्या महत्त्व है ?

पांचवाँ अध्याय

घरेलू उद्योग-धंधे (Cottage Industries)

घरेलू उद्योग धंधे की आवश्यकता

देती पर ता हम पूरी तरह विचार कर चुन । कि तु पवन मेरी से उमान वस्तुओं से हमारा काम न कभी चला और न चलगा । पहले हमारे देश क उद्योग धंधों का मान योर तक म विरता था । पर तु इस्ट इण्डिया कम्पनी की उल्टी नीति तय इग्लैंड म बड़े बड़े कारखाने खुल जाने क कारण हमारे कारीगरो को धक्का पहुँचा । अतएव व गाँव और खेती की आर भुफ पडे । अधिक देती क द्वारा इन अधिक लोगो का पालन न हो सक और उनका रदन सदा गिर गया । तभी से बराबर अय उद्योग धंधो और खासकर सामीख घरेलू उद्योग धंधो की आवश्यकता बनी रहती है ।

वैस तो हमको अनेक तरह का अय मान तैयार करना पडा है अथात् दस्तकारी और उद्योग धंधो का काय अखिनयार करना पड़ना है । भारत में कुछ बड़े बड़े कारखाने पुने हैं । कुछ लोगो का कहना है कि अगर इन कारखाना का सख्या बढ़ाई जाय ता लोगो को काम भा मिल और देश में मिजो से तैयार मान भी मिने । पर तु पिछले सो साल म जितन बड़ उद्योग धंधे खुले हैं उनम बीस लाख से अधिक मजदूर काम नगी करते । इन उद्योग धंधो को बढाने के रास्ता में अनेको कठिनाइयाँ हैं और अगर ये सब न भ हो जाय ता हमारा मतलब पूरा नहीं होगा । देती स से से कर किशो तरह राजी कमाने वाल बहुत स किसाना का इन धंधा में काम नहीं मिल सफगा । इसलिए छोटी माया क और खासकर घरेलू उद्योग धंधे हा उन के लिए उपयुक्त है । इनके अलावा कारखानो में मिलन वाली मजदूरो इत हा अधिक नहीं है कि गाँव क लोग शहर की तकलीफें और मच का सदन क जिए तैयार हो जायँ और फिर परदा प्रया क कारण सभी औरतें बाहर जाकर काम नहीं कर सकती । उनक लिए घरेलू उद्योग धंधे हा सब से उत्तम है ।

जात-बौत व भेद के कारण जुनाड़े, कुम्हार, चमार, लोहार आदि अपने पुत्रों का ही काम करते हैं। और जैसा कि विछले अध्याय में बताया था, चार छै महीने निटहन बैठे रहन वाले मिथानों व लिये यही धंधे ठाक हैं।

कुछ हिन्दोस्तानी उद्योग-धंधे

हिन्दोस्तान में प्रचलित धरेलू उद्योग धंधे अनेक हैं। लाह जो कि एक प्रकार व धृष्ट का गोद है तथा जा वारनिश करन और मोहर लगाने के काम में आता है अर बड़े पमाने में तैयार होने लगी है। पहले यह धरो में ही साफ की तथा बनाइ जाती थी। शरद और मोम की तरफ लोगों का अधिक स्थान नही गया है तब भी कुछ जगती और पहावी कौमें इस व म को करती है। साबुन फैक्टरी में भी बनता है और धरो में भी बनाया जाता है। बाजार म आगकी धरलू बन हुए गहुन से साबुन मिल मकर है। हाथी दाँत का कारीगरी में तो भारत व शिल्पी मशहूर हैं। हाथी दाँत जितना रडिया और उत्तम काम होता है वह प्राय अफ्रीका व पर होता है। दिल्ली, मुर्शिदाबाद, मैसूर, दूबनकोर यगैरह हाथ कारीगरी के लिये मशहूर हैं। रेशमी कपड़ का काम अब गया है। जामनी और बनावटी रेशम व कारण भारत व बिल्कुल मारा गया। तब भी भागलपुर आदि स्थाना कपड़ा हाथ से तैयार किया जाता है। उत्तरी हिन्दुस्तान काश्मीर में उम्दा आर रडिया ऊना कपड़े बनत हैं। कारखान पुन गये हैं तब भी मोटे कम्बल, दरियों, पहा है। काश्मीर के शाल गहुत मशहूर हैं। कारचोषा उच्चर में बड़ी उत्तम दशा में है। तम्बाकू, काली करना, सिरका डानना, सत निकालना, डबकरोटी यगैरह काम धरेलू उद्योग धंधों में गिन जात हैं। उद्योग धंधों का वर्णन करते हैं।

वरतन बनाना

इस प्रान्त में वरतन बनाने का काम

बसकुट और लोहा के बड़े अच्छे अच्छे बरतन बनाए जाते हैं। बरतन बनाने का काम करने वालों को ठठेरा कहते हैं। मुरादाबाद व कलकत्ते के बरतन बड़े मशहूर हैं। अब तो बरतन बनाने का काम बहुत बड़े पैमाने पर किया जाने लगा है। घनी आदमी लकड़ों बरतन बनाने वालों का मौकर रख लेते हैं और खूब तादाद में बरतन तैयार करते हैं। यह तो हुआ धातु के बरतनों का हाल। अब मिट्टी के बरतन के बारे में सुनिये। कुम्हार और कुम्हार के चाक से तो दर कोई वाकफ़ होगा। तुमने कुम्हार को अपना पत्थर की त्राम घुमा फर उम पर रखी मिट्टी से सफ़ारा, करई, हँडिया, मटकी, घड़ा बनाते तो देखा ही होगा। वह किस सपाईं के साथ अपनी उँगलियों को नचा कर अच्छी अच्छी चीजें बना लेता है। हर एक गाँव में कुम्हार होता है। बनारस की तरफ मिट्टी के चिकन काल बरतन बनाए जाते हैं जो बड़े नशीब हात हैं।

चटाई और टोकरी बनाना

बरतन के अलावा कलकत्ते का तरफ बड़ी उम्दा चटाइयाँ बिक्री जाती हैं। ये चटाइयाँ खूब पतली बिक्री हुई रहती हैं। सयुक्त प्रान्त में अकसर ताड़ के पत्तों की चटाइयाँ बुनी जाती हैं। ये कुछ भदों और कमजोर होती हैं। चूके इस समय बिनाई का जिक्र आ गया है तो गावों में टोकरी, डलिया आदि बनाने का हाल भी बता देना चाहिये। ये डलवे, टोकरी भाऊ के पेड़ों से, सरकडो तथा बाँस की तीलियों से बनाई जाती हैं। मत्तदूर के टोकरी, भूसा व उपली रखने के टोकरी भाऊ और सरकडो से बनाए जाते हैं। पतले-पतले भाऊ के इठल मिनी कर लचकदार बना लिए जाते हैं। इन्हीं से डलिया बनाते हैं। बाँस की टोकरी बनाने में पहले बाँस को चीर कर चोड़ी पतली-पतला खपाचें बना लेते हैं। पहले कुछ मोटी और चौड़ी खपाचियों को आड़ा समझ कर रख लेते हैं उससे बाद दूसरे बटलों को चारों आर घुमा कर उन्हें इस तरह बसते जाते हैं कि वे अलग अलग न हो सकें। सरकडो से टोकरी तथा मोटे आदि बनाए जाते हैं।

गुड़ बनाना

गाव में किसान मन्त का ऊँच से रख निकालते हैं। इस रस का गुड़

बनाया जाता है। गुड़ बनाने के लिये रस को बड़े बड़े कड़ाहों में उबालते हैं। हमारे यहाँ के किसान गुड़ बनाने में सड़ाई का स्थान नहीं रखते। तिनके पत्तियों आदि सब रस के साथ गुड़ में रहने देते हैं। इनके अलावा जो रस के ऊपर का मीन होता है उसे भी ठीक से नहीं निकालते। मरठ, बनारस और कानपुर का गुड़ खूब अच्छा और साफ़ समझा जाता है।

चर्खा कातना और कपड़ा बुनना

किसान परिवारों का एक दूसरा महायुक्त धंधा है सूत की कताई और कपड़े की बुनाई। महामा गाँगी का कहना है कि चर्खे से हम स्वयं-य धान कर सकते हैं। इस काम में श्रम भी बोल लाल जुनाही और सूत कातने वाला को काम मिलता है। सूत कातने का काम ऐसा है कि किसान को जब पुरसत हो तभी कर सकता है। एक चरखे में कोई ज्यादा पूँजी भा नहीं लगता। यदि चरखे पर साठ आठ घंटे काम किया जाय तो कातने वाला अच्छी तरह ८ आने रोज कमा सकता है। सूत कातने से एक और फायदा यह है कि इसी सूत से किसान अपने घरवालों के पहनने के लिए कपड़े बुना सकता है। सचमुच सूत की कताई और कपड़े की बुनाई का काम ऐसा है कि दरिद्र किसानों की दरिद्रता बहुत हद तक कम हो सकती है। पुराने समय में तो ढाका की तरफ ऐसा पतला सूत काता जाता था कि उसके बिने हुए मलमन का धान एक छोटी द्विबिया में आ जाते थे। कहते हैं कि जहाँगीर का किसी ने एक छोटी अँगूठी में नग की जगह धान रख कर भेंट किया था।

कुछ लोगों का कहना है कि हाथकपड़े पर कपड़ा बुनने का धंधा मिलों के मुकाबिले में नहीं टहर सकता किन्तु उन्हें यह जान कर आश्चर्य होगा कि हम गिरी हुई श्रमस्था में भी हाथकपड़े लगभग २५ लाख बुनकरों को काम देते हैं और देश में जिनके कपड़े की खपत होती है उसका एक चौथाई कपड़ा हाथकपड़ों पर तैयार होता है। फिर भी इस धंधे की दशा अच्छी नहीं है इसके मुख्य कारण यह हैं—१—जुताहे निर्धन हैं। उनके पास पूँजी नहीं होती, उन्हे सूत इत्यादि उधार लेना पड़ता है और इस कारण वह मजदूर के चंगल में फस जाता है। (२) उसके कपड़े तथा अन्य औज़ार

उनमें उन्नति होने की आवश्यकता है (३) जुलाहा अधिकतर पुरानी डिज़ाइन ही तैयार करता है। नये डिज़ाइन जिनकी बाजार में माग है उसको सीखने की जरूरत है। (४) जुलाहे को अपने माल को बेचने को न तो कना ही आती है और न उसके पास विज्ञान देने तथा कनबैर इत्यादि रखने की सुविधाएँ ही हैं। आवश्यकता इस बात की है कि सहकारी समितियाँ ने द्वारा उसके तैयार माल को बिक्राने का प्रबंध किया जावे।

पशु-पालन

जैसा कि पिछले अध्याय में बताया गया था किसानों के लिए एक बड़े महत्त्व का उद्योग है पशु पालन। गाँव में बहुत से लोग गाय पालते और दूध भी बेचते हैं, लेकिन न ता वे रोजगार के ढंग से जानवरों की सेवा करते हैं और न रोजगार न दग से अपना माल ही बेच पाते हैं। इसीसे देखा जाता है कि किसानों को अक्सर गायों के पालन में कोई लाभ नहीं हाता। कहन को हम लोग गाय को गो माना करते हैं, लेकिन हमारे कष्टान न तो उ ह अपनी माँ की तरह खाना देते हैं और न अच्छी जगह में उ ह रखते ही हैं। इसके अलावा गाय-धैरा की सजाई नहीं रखी जाती, पनस्वरु रूपा दोष में अनेक रोग फैल जाते हैं और बटुनों की अकाल मौत हो जाती है। इन्हीं कारणों से दोरों की नसलें कमजोर होनी जा रही हैं। पहले तो किसान गाय खरीदने में गलती करते हैं। गाय दुधार होनी चाहिये। इसक लिए यह जरूरी नहीं है कि गाय मोटी हो। गाय की खाल पतली तथा रोएँ तरम और बिकने हाने चाहिए। धन सीधे हो, न बहुत छाटे हों न बहुत बड़े। काची, लान और मूरे ग की गायें अक्सर अच्छी होती हैं।

दूध का काम

गाय पालने से बहुत फायदे होते हैं। गाय का बहुत बड़ा होकर रत मोतने के काम आता है। गाय का गोबर, उपली, म्वाद और घर लीरने में काम आता है। गाय के दूध के बगैर तो हमारा काम नहीं चल सकता। कोई दूध पाता है। कोई उसका दही, मक्खन या मलाई-खड़ी बनाकर खाता है। दूध का पाया बनाया जाता है। हम आगे किसी अध्याय में बतावेंगे

कि दूध क्यों ताकतवर होता है। ताकतवर होने के कारण ही तो छोटे बच्चों को गाय का दूध मिलाया जाता है, लेकिन दूध में बीमारियाँ भी बहुत सी पैदा होती हैं। दूध की सजाद में जरा भी लापरवाही करने से वह खराब हो जाता है। जरा भी सजाद की कमी होने से बैक्टीरिया नाम का एक छोटा दूध में पैदा हो जाता है इसने दूध पीरन बीमारी का घर बन जाता है। हमारे खाले दूध दुहन में बड़ी लापरवाही दिखाते हैं। न तो वे कभी घन को घोलते हैं, न अपने हाथों को दुहाने के पहले साफ़ करते हैं और न साफ़-सुपे करते हैं। अपने अनावा बच्चे के दूध पी चुकने के बाद भी घन का घाना और न कोई दूध का ही राग हो। दुहने की जगह पर गर्द-गुबार न उड़ना चाहिये। दूध का बरतन साफ़ मज्जा हुआ हावे और जब दूध बचने के लिये ले जाया जावे ता बरतन को हमेशा साफ़ कर लेना चाहिए। यद तो दुहन के मन्वच की बातें। अब दूध बेचने का तरीका सुनिए। हमारे देशतो माई अगर सेर भर दूध होता है तो पात्र डेड पात्र पानी मिला देते हैं। यही नहीं निशान के विद्वानों ने एक ऐसी मशान निकाली है जिसमें डालकर घुमाने से कच्चे दूध में से मन्वच अलग निकल जाता है। बचे हुए दूध को मन्वनिया दूध कहते हैं। आजकल देहाती इस प्रकार पहले से ही मन्वन निकाल कर तब दूध को बेचने लाते हैं। ऐसा दूध किसी काम का नहीं होता। हमारे हलवाई इसी दूध का खराद कर बेचते हैं। इसका दही जमाते हैं। चूँकि मन्वनिया दूध पतला और सार रहित सा मालूम पड़ता है इसलिए उसको गाडा बनाने के लिए थोड़ा सा धरारोट या तीखुर डाल देते हैं। अगरोट पड़े दूध के दही के ऊपर मोटी मलाई जम जाती है। यह काम शर्त में काफ़ी किया जाता है, अगर हम चाहते हैं कि अधिक किसान दूध बेच कर कुछ पैसे कमा सकें तो उन्हें दूर स्थित शहरों और नगरों बिना बिगड़ा दूध ले जाने की सुविधा जरूरी है।

मन्वन और घी

दूध से मन्वन और घी भी बनाया जाता है। ऊपर हमने मन्वन

दूध का हाल बताते समय कच्चे दूध से मक्खन निकालने की एक तरकीब बताइ है। कच्चे दूध से मक्खन निकालने की जिस मशीन का जिन्न ऊपर आया है वह अभी हमारे गाँवों तक नहीं पहुँची है। शहर में ही उनका उपयोग किया जाता है। तुमने पिछली बार जो मक्खन मील लिया होगा वह इसी तरह बनाया गया था। दूध का आग पर पका कर मयने से भी मक्खन निकल आता है, लेकिन शहर वाले पकाने के भण्डे में नहीं पड़ते। गाँवों में जो घी तैयार किया जाता है उसके लिए पहले दूध को उबालते अथवा पकाते हैं। परु हुए दूध में थोड़ा सा पहले का रक्ता हुआ दही डाल कर रख देने से सात आठ घंटे में दूध जम कर दही बन जाता है। इस दूध को भयानी से रूब मयते हैं। मयने से मक्खन ऊपर तैरने लगता है और निकाल लिया जाता है। मक्खन निकालने के बाद जो दूध सा पदार्थ बच रहता है उसे मट्टा कहते हैं। मय कर निकाले मक्खन को नैन् भी कहते हैं। नैन् कच्चे दूध से निकाले मक्खन से कहीं अधिक अच्छा और स्वादिष्ट होता है।

मक्खन का अच्छी तरह गरम करके घी बनाया जाता है। मक्खन में दूध का कुछ भाग बना रहता है। औटाने पर वह जल जाता है और घी तैयार हो जाता है। मक्खन एक दो दिन से अधिक नहीं ठहरता। दूध का भाग रहने से उसमें बदबू आने लगती है और वह खराब हो जाता है। इसलिए मक्खन ताज़ा खाया जाता है। घी बनाने में खराब होने वाला भाग पहले ही जल जाता है। इसलिए घी बहुत दिनों तक रहता है। घी और मक्खन दोनों शरीर को ताकत पहुँचाते हैं। लेकिन ये बहुत अधिक हजम नहीं किए जा सकते। मक्खन को लोग घी से अधिक लाभदायक मानते हैं। आजकल बेचने वाले घी में नारियल या दूसरी चीजों का तेल भी मिला देते हैं। इसके अलावा आजकल तरह तरह के बनावटी घी चल निकले हैं। जैसे घास का घी, कोकोजम इत्यादि। बहुत से लोग मक्खन को अच्छी तरह नहीं तपाते हैं बल्कि आधा पका आधा कच्चा ही बेचते हैं। इसलिए तुमने कभी किसी को घी के बारे में कहते सुना होगा कि घी में मट्टा है। आजकल शहर में अच्छा घी मिलता ही नहीं। हाँ गाँवों में

अच्छा घी मिल जाता है। इसलिये आजकल घी मोल लेते समय उसे अच्छी तरह देख कर लेना चाहिए।

रस्सी बनाना

तुमने देखा होगा कि गाय दुहते समय ग्वाला अक्सर गाय के पिछले पर बाँध देता है। पर किस चीज़ में पैर बाँधे जाते हैं ? इसके अलावा कुयें से पानी किसमें निकाला जाता है ? गेतों की सिंचाइ के लिये जो मोट प्लाई जाती है वह किससे खाँवा जाती है ? इस तरह के सवालनों के जवाब में तुम पौरन कह दोगे कि ये सब काम रस्से से होते हैं। किसी में रस्सी लगी होनी है किसान में रस्सा। पतली डोर का रस्सी कहते हैं और मोटी को रसा। किसानों का तो बिना रसा रस्से के काम ही नहीं चल सकता। घर में, रोत में, गाड़ी को खानी बनाने में, बोझ बारने में उसे रस्सी की ज़रूरत पड़ता है। क्या तुम बता सकते हो कि ये रस्सी-रस्से किसके बनते हैं और कैसे बनते हैं ? अच्छा मुनो, मूँज के, घास के, नारियल के जगश्रो फ, मन के, सरपत के तथा और और चीज़ों के भी रस्से बनाए जाते हैं। मूँज की महीन बटो रस्सी को घाघ कहते हैं और मूँजिया बुनने के काम में आता है। घास और मूँज का रस्सी बनाने के पहले उसे पानी में भिगोते हैं। अच्छी तरह भाग जाने पर उन्हें सूख कूटते हैं। जब उनके डोरे डोरे अलग हो जाते हैं तब उनमें से चार-चार छेँछेँ रेशे हाथों में लेकर पेंडते और आपस में मिलाव चलते हैं। एक लम्बी रस्सी तैयार हो जान पर उसे दोहरा सहारा करक और मोटा व मज़बूत बना लेते हैं। सन की रस्सी बनाने के लिए पहले सन व पौधों को सड़ा कर सुखाया जाता है, तब सन अलग कर लेते हैं। और उसे घट दर रस्सी तैयार करते हैं। हमारे यहाँ व किसान सन का गदे पानी में सड़ाते हैं जिससे वह मीना हो जाता है। इसके अलावा हमारे यहाँ के सन में कूड़ा भी होता है। फिर वे मोड़ी सन के लच्छे बना डालते हैं जिससे रेशों व उलझ जाने पर उन्हें सुलभाने में बड़ी मेहनत पड़ती है। मूँज का रस्सी मज़बूत होती है और पानी पड़ने पर बिगड़ती नहीं। लेकिन सन की रस्सी में रहने

से ठीक नहीं रहती। नावों को घोंघने के लिए जो बड़े बड़े रस्ते बनाए जाते हैं वे मूज के ही होते हैं।

लकड़ी का काम

रस्मी के अलावा दूसरी चीज़ है जिसके बिना किसानों का काम नहीं चल सकता। गाँव में बढई का होना जरूरी है। हल, जुआ, पालकी, खिड़की, दरवाजा व डई द्वारा ही तैयार होते हैं। डोबट, लडाऊ और खुरपा, कुल्हाड़ी व बसूना व रेंट भी वही बनाता है। लकड़ी के जो कुछ भी काम बन सकते हैं वे बट की ही दस्तकारी के नमूने हैं। लेकिन बढई एक ही दो चीजों व बनाने में अपना हुनर दिवाते हैं। जो सब बातों में अपनी टॉंग अडाते वे किसी बात में निपुण नहीं हो पाते। गाँव के बढई को हल तथा बैलगाड़ियाँ तो जरूर ही बनानी पड़ती। कोई बढई हल बनाने में होशियार होता है, कोई गाड़ी बनाने में। इससे अलावा उत्तरी हिन्दोस्तान में लकड़ी पर चिताई का काम देखने में आता है। कारीगर लकड़ी पर ऐसे उम्दा उम्दा बेल-बूटे बनाते हैं तथा ऐसी नफाशी करते हैं कि देखते ही बनता है। इसमें शीशम, शाल व आघनूस की लकड़ी अधिकतर काम में लाते हैं। नागपुर तथा अन्य जगहों में चिताई का काम बहुत अच्छा होता है। बनारस की तरफ लकड़ों के खिलौने बनाने पर उस पर इसके रंग से चित्रकारी की जाती है और फिर एक लाख किस्म की वारनिश कर दी जाती है। ये खिलौने काफी अच्छे होते हैं।

लोहार का काम

बढई के बाद गाँव के लोहार का नम्बर आता है। हल का पाल, कुल्हाड़ी का लोहा, खुरपा, बसूना आदि चीजों व बनाने व लिये प्रत्येक गाँव में एक लोहार का रहना जरूरी रहता है। लोहार लोहे को आग में तपाता है। फिर उसे लाहे व चौड़े ऊँचे टुकड़े पर जिसे घन कहते हैं हथौड़े से पीट कर जिस शकल का चाहता है बना लेता है। लेकिन अब तो लोहे के बड़े-बड़े कारखानों के खुल जाने से लोहार का बहुत काम घट गया है। तब भी लोहार देहात में अपना स्थान रखता है।

तेली का काम

लाहार की तरह ही तेला का हाज है। गाँव में तेन बनाने के काम में आता है। तिलना का तेन जलाया भी जाता है और गायों में। मरखी, अनखी, महुआ आदि और भी कितना चीनी का तेल निकलता है। गाँव में एक तना अमरुप होता है। तेन पेरना और बेचना ही उसका काम हाता है। तिलनी कलहू में परा जाती है। परपर का एक बटो सा आगनी जमीन में गड़ी होना है। आगनी के पास ही एक लकड़ी का गम्भा रहता है। उसमें लकड़ों का बसा सा कोलहू बाँध देते हैं जिसमें वह सधा रहे। आगनी में तिलना डालकर तेन को कोलहू के माप आगनी के चारों ओर घुमाते हैं। ऐसा करने से तिलनी कोलहू के नीचे गिरती है और उसमें तेन निकलता है। पत्पर में छेद हाता है। तेन उस छेद में जमीन में रक्ते हुये एक बरतन में गिरना जाता है। तेन निकल जाने पर तिलनी को खनी हो जाती है। खनी बनारों को गिनाइ जाता है जिससे वे दूध आदि दें। अब तो कहीं-कहीं आबल-एजिन मशीनों द्वारा तेल निकाला जाता है। इससे चालू करने में खच तो ज्यादा खरूर होता है लेकिन देशा कोलहू में कितना तेन दिन भर में निकलता है उना तेन एजिन के जतिये आधा घंटे में निकल आता है।

जूते बनाना

जिस तरह गाँव में जुनाहा, बटु, लुहार आदि रहते हैं, वैसे ही चमार भी रहता है। अगर इनमें से कोई भी गाँव छोड़ दे तो सब लोगों को तकलीफ हागी। चमार हमारे लिए नए-नए जूते बनाना है और पटे पुगने जूतों की मरम्मत करता है। गाँव का चमार खेती भी करता है और खेता से फुरसत मिलन पर जूता बनाने का काम कर लेता है। यों ता गाँव का चमार धातों पर ही काठी और पैल हाँफिन के लिये चर्मड़े के तस्में बगैरह भी बनाता है। शहरों में चर्मड़े के बक्स और मशक बगैरह बनाए जाते हैं। लेकिन गाँव का चमार अधिकतर जूते ही बनाता है। दुम्ने देहाती जूता ता देखा ही होता। शहरों में अब परिचमी टग के पैशनदार जूते क खन जाने से को कोइ नहीं पूछता। लेकिन अमेजों के आने के पहले सब कोइ

पहनते थे। हमारा देहाती जूता बड़ा मजबूत तथा अच्छा होता है। इससे पहले लोहे के पैर मर्मी नहीं पहुँचती। फिर यह जल्दा पहना और उतारा जा सकता है। चमड़े के छून से हाथ खराब हो जाते हैं और हाथों को धोना पड़ता है। ये विचार पहले थे और अब उठते जाते हैं, इसीलिए ये जूते ऐसे बनाए जाते हैं कि इन्हें पहनने और उतारने में हाथ न लगाना पड़े। जूता गाय, बैल आदि जानवरों की खाल का बनाया जाता है। जानवर के मर जाने पर चमार उसकी खाल को निकाल लाते हैं, खाल को पहले धूप में अच्छी तरह सुखाते हैं जिससे वह खूब कड़ी हो जाती है। हमारे बाद खाने के रोएँ साफ़ कर दिए जाते हैं। फिर खाल को चमकाते हैं। जूता बनाने समय पैर का नाप लेकर चमार उसी तरह हमारे पैर का जूता तैयार कर देता है जिन तरह कि दर्जी नाप लेकर हमारा कोट या कमीज सा देता है। अब तो जूता बनाने के बड़े-बड़े कारखाने खुल गए हैं, जिनमें बड़े उम्दा उम्दा मस्ती जूते बनाए जाते हैं। भारताय कारखानों में बने जूतों में कानपुर, आगरा या बाटा कम्पनी (कलकत्ता) के जूते महहूर हैं। अब हम कुछ ऐसे उद्योगधरों का पयान करेंगे जो गाँवों में खोले जा सकते हैं।

फल, फूल और तरकारी पैदा करना

हमने पिछले अध्याय में फल, फूल और तरकारी भाजी के बाग़ लगाने के काम की चर्चा की थी। यदि किसान उपज की खेती के साथ एक छोटा सा बाग़ लगा ले तो उसे फल और तरकारी तो खाने को मिलेंगी ही, उन्हें बेच कर वे कुछ पैसे भी पा सकेंगे। फूलों से किसान का घर तो महक ही उठेगा उससे खुशबूदार जल, इत्र तथा गुलाब से गुनकद बनाया जा सकता है। कुछ फूल के पेड़ बजर भूमि में भी फूल सकते हैं और तरकारी की बाटिका में किसान के घर का गन्दा पानी काम आ सकता है। परन्तु यदि बाटिका किसान के घर से मिली नहीं है तो गन्दे पानी को बाटिका तक ढोना पड़ेगा। फूलों से पूरा लाभ उठाने के लिए किसान को उचित शिक्षा, ट्रेनिंग तथा सहायता देने की आवश्यकता पड़ेगी। परन्तु किसान गाँव में फल व तरकारी किसके हाथ बेचेगा? अगर वह किसी शहर के पास है तब वह उसे शहर

बाकर अथवा शहर के विक्रेताओं के हाथ उर्दू बेच देगा । अगर ऐसा नहीं है तब बिना यातायात के प्रवाय के वह पैसे नहीं कमा सकता ।

शहर का धन्य

ऊपर फूलों का निम्न आया था । फूलों के बीच अगर शहर की मकनी पाल कर छुत्ता लगवाया जाय तो शहर पैदा किया जा सकता है । लेकिन छुत्ते के लिये फूल की बाटिका आवश्यक नहीं है । अब तो लकड़ी के एमे बन्ध मिलते हैं कि उनमें शहर की मकनियों पाल कर शहर निकालने के लिए न ता मकनियों को उड़ाना पड़ता है और न छुत्ते को तोड़ना । इस घरे में झूमट भा कम हाता है, पूँजा भी कम लगती है और बगह भी कम मिलती है । शहर अति पौष्टिक भोजन भी है । परन्तु इस घरे को सफरता के लिए भी किसान को कुछ शिल्पा तथा विनी में सहायता आवश्यक है । दक्षिण भारत में डाक्टर स्पेंसर हेच तथा दूसरे ईसाई मन्त्रव वालों की मेहनत के कारण गाँवों में इस घरे का काफ़ी प्रचार हुआ है ।

अन्य उद्योग-धन्ये

ऊपर बताए गए कुछ धन्य उद्योग-धन्ये के अलावा अभी बहुत से और घरे हैं । मध्यप्रान्त में बर्बा नगर में एक "अविन भारत ग्राम उद्योग सभ" है । उसका उद्देश्य गाँवों की हानत सुधारना है । उसकी देगरेष में नीचे लिखे ग्राम उद्योग चल रहे हैं —

धान से चावल निकालना, आटा पासना, गुड़ बनाना, तेल निकालना, शहर का मकनियों पालना, मछली पालना, दूध का काम, कबज बनाना, रेशम का माल बनाना, सन का कताई और बुनाई, फागज बनाना, चट्टाई बनाना, कपियों बनाना, पत्थर की कारागरी, सातुन बनाना, चमड़ा तैयार करके उसमें तर्द-तरह की वस्तुएँ बनाना इत्यादि ।

घरेलू उद्योग-धन्ये और सरकार

हमने इस अध्याय में कुछ खास उद्योग धन्ये के बारे में तो खूब कर बताया है और कुछ के बारे में सक्षेप में हाल कह दिया है । निन धन्ये के अन्धी तरह बताया है उनका गाँव से अविक सम्भव है ।

इसका पहल मतलब नहीं है कि गाँव में गाँव से अधिक सम्बन्ध रखने वाले धंधों की ही उन्नति की जाय। अगर सरकार पहले से योजना बना कर गाँवों में कृषि के साथ उद्योग धंधों का व्यवस्था और उन्नति करे तो धरेलू उद्योग धंधों द्वारा साबुन, कागज, कपड़े, बटन, सुरक्षित झिले फल, हाथ के बने कपड़े आदि अनेकों पदार्थ तैयार किये जा सकते हैं। यह गाँवों के लिए उपयुक्त धंधे चुन सकनी है। उनको चालू करने की व्यवस्था कर सकनी है। किसानों को उनमें शामिल होने के लिए प्रोत्साहन, शिक्षा, और आर्थिक सहायता दे सकनी है। धंधों के लिए यातायात के साधनों की उन्नति कर सकनी है और मान की विका सुनभ कर सकनी है। अगर गाँवों में बिजली भी पहुँच जाय तो कार्य क्षमता और काम क्षेत्र अधिक बढ जाय। सरकार ही यह काम सम्पन्न कर सकती है। प्रांतीय तथा दिल्ली की केंद्रीय सरकार ऐसी कोशिश कर रही है।

अस्तु, हम रोती और धरेलू उद्योग धंधों के बारे में राफी जान गए, इनके जरिए बहुत सी वस्तुएँ उत्पन्न होती हैं। अब प्रश्न उठता है कि जो वस्तुएँ उत्पन्न की गई हैं उनका काम में किस प्रकार लिया जाय। अर्थात् वस्तुओं का किस तरह से उपभोग किया जाय। उपभोग के सम्बन्ध की सारी बातों पर हम अब अर्थशास्त्र के उपभोग विभाग के अन्दर विचार करते हैं।

अभ्यास के प्रश्न

१—अपने गाँव के किसी किसान से पूछकर लिखिये की प्रति मास उसे खेती सबधी कौन कौन से काम करने पड़ते हैं। किन महीनों में उसे सबसे अधिक काम रहता है और किन महीनों में उसे सबसे कम ?

२—आपके गाँव के किसान माधारणतः वर्ष भर में कितने महीने बेकार रहते हैं ? इन बेकारी के समय में आप उनको कौन सा काम करने की सलाह देंगे ?

३—आपके गाँव में आनकल प्रति मास कितना सूत काता जाता है ? यदि गाँव के सब बेकार स्त्री पुरुष प्रति दिन चार घंटा सूत कातने लगे तो एक मास में कितना सूत तैयार हो सकता है ?

४—आप के गांव में या आसपास के गाँवों में जुनाहों की क्या संख्या है। ये जुनाहे हाथ कते सूत का कहीं तक उपयोग करते हैं।

५—जुनाहों की आर्थिक दशा का वर्णन कीजिये और उनको दशा सुधारने के उपाय बताइये।

६—आर्थिक दृष्टि में शहर प्रचार की आवश्यकता समझाइये।

७—अपने गाँव क कुम्हार की आर्थिक दशा का वर्णन कीजिये वद अपना आमदनी किस प्रकार बढ़ा सकता है ?

८—सुकृप्रात में पीतल के बरतन किन स्थानों में अच्छे और सस्ते मिलते हैं। मुगादानद किस प्रकार क बतना के लिये प्रसिद्ध है और उस उद्योग का वर्तमान दशा कैसी है ?

९—आप क जिले में गुड़ किस प्रकार बनाया जाता है। इस प्रात में गुड़ कहीं अच्छा और सस्ता बनता है ?

१०—शहर में दूध का क्या भाव है। गावों में दूध किस दर पर मिलता है। दोनों दरों में अंतर के क्या कारण हैं ?

११—शुद्ध दूध की पहिचान लिलिये। शहर में शुद्ध दूध सस्ते भाव देने के लिए योजना तैयार कीजिये।

१२—धी म कौन सी वस्तुएँ प्रायः मिनाई जाता हैं ? शुद्ध धाँ की क्या पहिचान है ?

१३—आपके गाँव में चमारों की क्या दशा है। उनका दशा किस प्रकार सुधारी जा सकती है ?

१४—अपने गाँव क मुख्य घरेलू धवों का वर्णन कीजिए। उनमें कौन-कौन सा बुराईयाँ हैं ? उन्हें आ- कैसे दूर करिएगा ?

१५—यदि आपकी १००) दे दिया जाय तो आप नसे अपने गाँवों के घरेलू उद्योग धवों को सुधारने के लिए किस प्रकार खर्च करेंगे।

१६—सरकार योजना बना कर किस प्रकार घरेलू उद्योग-धवों की उन्नति कर सकती है। उदाहरण देकर समझाइये।

हो पर मेरे लिए नहीं। हाँ कुछ देर के बाद वह मेरे लिए भी जरूरी बन सकती है। मान लो, मैं खा चुका हूँ और तुमने अभी खाना नहीं खाया है इसलिए तुमको अभी खाना खाने के लिए भोजन चाहिये। कुछ घण्टों के बाद जब मुझे फिर से भूख लगेगी तब मुझे भी भोजन की जरूरत पड़ेगी।

किसी आवश्यकता की वृत्ति के लिए एक से अधिक साधन होते हैं। अगर आप को धूम्रपान की इच्छा है तो आप तम्बाकू, सिगरेट, सिगार और बीड़ी इनमें से कोई भी चीज पी सकते हैं। इसी से वे चाजें एक दूसरे की जगह लेने की कोशिश करती हैं। अकाल के दिनों में गरीब लोग रोटी की रोटी के बदले चना, ज्वार, बाजरा इत्यादि की रोटी खाते हैं। इसी तरह आजकल किसी वस्तु को एक जगह से दूसरी जगह भेजने के लिए रेलगाड़ी और माटर कारियों में लागू डाँट चल रही है।

अब हम किसी आवश्यकता को कभी कभी पूरी करते हैं तो वह आवश्यकता हमारे लिए अनिवार्य बनने की वांछित करता है। जैसे कोई मनुष्य किसी के कहने से कभी शराब पी ले तो फिर बाद को उसका शराब पीने का चक्का लग जाता है और वह पूरा पियककड़ बन जाता है। उसकी शराब पीने की आदत ऐसी जबरदस्त हो जाती है कि वह आसानी से उस आदत का नहीं छुड़ सकता, इस प्रकार और आवश्यकताओं की भी आदत पड़ जाता है।

आवश्यकता के भेद (Kinds of Wants)

वह तो हम जान गये कि आवश्यकता किस करने है और उसका लक्षण क्या है, अब यह जानना जरूरी है कि आवश्यकताएँ कितने प्रकार की होती हैं। यों तो हम आवश्यकता के लक्षणों के मुताबिक कह सकते हैं कि कुछ जरूरतों को शीघ्र पूरा करना पड़ता है, किसी का देर में। जैसे पहनने के लिए कपड़ा चाहिए न। मने लेकिन भूख लगने पर खाना अवश्य मिलना चाहिए। कुछ आवश्यकताएँ ऐसी होती हैं कि उसको पूरा करने के लिए बहुत से साधन होने हैं जैसे धूम्रपान के लिए हम बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू, या सिगार पी सकते हैं। इसी प्रकार नशा करने के लिए हम मग, अफीम, तानी,

शरारत वीरह भी सकते हैं। ठीक, लेकिन इस तरह के तो शायद सैकड़ों विभाग बनाए जायें तब भी काम न चलेगा। मर से अच्छा तरीका यह है जिसमें आवश्यकताओं को तीन हिस्से में बाँटते हैं। पहले तो वे आवश्यकताएँ आती हैं जिनको हम आवश्यक (Necessaries) समझते हैं। अर्थात् अपाहिज कैसा ही मनुष्य क्यों न हो, वह अपने शरीर को नाश होने से बचाने की हमेशा कोशिश करता है, पेट भरने के लिए सब को भोजन और पीने को पानी चाहिए। पहनने के लिए कपड़े की आवश्यकता पड़ती है। यहाँ पर एक बात नाट करने लायक है। राम साधारण भोजन करता है, पटा पुराना कपड़ा पहनता है और दूरी-दूरी भांगड़ी में रहता है। इसके विपरीत श्याम अच्छा अनाज, दूध, फल इत्यादि खाता है। वह साफ-सुधरे कपड़े पहनता है और हवादार मकान में रहता है। एक तरह से राम और श्याम दोनों ही जीवन रक्षा के लिए जरूरी वस्तुओं का उरभाग करते हैं, परंतु कुछ वर्षों में राम कफजोर और रोगी बन जायगा और श्याम मजबूत बतलगा। कहने का मतलब यह कि आवश्यक वस्तुओं में से कुछ तो केवल मनुष्य को जिंदा बनाए रखता है और कुछ आदमी की जीवन-रक्षा के अलावा तन्दुरुस्ती भी प्रदान करती है। जीवन रक्षा (Necessaries for existence) के लिए आवश्यक वस्तुओं के अलग-अलग उन चीजों की भी गिनती किया जाता है जो मनुष्य की आदत के कारण जन्म पड़ जाती हैं। उदाहरण के लिए किसान तम्बाकू पीते हैं। परंतु क्या जीवन निवाह के लिए जरूरी है? क्या इसके बिना किसान जिन्दा नहीं रह सकते हैं? उत्तर है रह सकते हैं। परंतु शुरू से ही तम्बाकू पीते पीते उनकी आदत ऐसी हो गई है कि अब वे बिना तम्बाकू किए कुछ काम ही नहीं कर सकते। अतएव कुछ वस्तुओं की आवश्यकता तो आदमी को जिन्दा रखने के लिए पड़ती है, कुछ मनुष्य का स्वस्थ और निपुण बनाए रखती है और कुछ हमारा आदतों के कारण अनिवाय बन गई है। इस प्रकार आवश्यक वस्तुओं के तीन भेद हुए—जीवन रक्षा, निपुणतादायक और अति आवश्यक (Conventional necessities) दूसरे हिस्से में वे आवश्यकताएँ रखी जिन्हें मनुष्य को आराम करने के लिए जरूरत

की वस्तुओं (Comfits) से शरीर को सुख मिलता है और काम करने की ताकत भी बढ़ती है। लेकिन इन पर जितना खर्च किया जाता है उस हिस्से से कार्य कुशलता नहीं बढ़ती। जैसे किमी गरीब आदमी के लिए घोती, कुत्ता और चप्पल उनकी कार्य-कुशलता बढ़ाते हैं लेकिन अगर वह बढ़िया महीन घोती, रेशमा कमीज व कपड़े का उम्दा जूता पहने तो ये वस्तुएँ उसने लिए आराम की वस्तुएँ कही जावेंगी। इसी तरह से गरीब किसान के लिए साइकिल, पडी, पक्का मकान, इत्यादि भी आराम की सामग्री में शामिल किए जा सकते हैं।

अतः में उन आवश्यकताओं का बारा आती है जिनको पूरा करने के लिए मनुष्य विलासिता की वस्तुओं (Luxuries) का उपयोग करता है। हम तब तो इन चीजों पर जो रकम खर्च की जाती है उससे बहुत कम कार्य कुशलता मिलती है। कभी कभी तो इन वस्तुओं के उपयोग से कार्य-कुशलता बढ़ने की जगह घटने लगती है। उदाहरण स्वरूप बढ़िया आलीशान मकान, बहुत कीमती भड़कीली पोशाक व विनायती हिम्की और अगूरी शराब इत्यादि गिनाई जा सकती है। विलासिता की वस्तुओं के सेवन करने से आदमी को आलस घेर लेता है और काम करने का जी नहीं चाहता। शराब इत्यादि के सेवन से तो आदमी मिलकूल कमजोर नाकाम और रोगी बन जाता है।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि आवश्यकताओं के ये भेद एक दूसरे से भिन्न नहीं हैं। दर असल इनका भेद आदमी की परिस्थिति व अनुसार समझा जाता है। मनुष्यों की प्रकृति, आदत, पैशन आदि पर आवश्यकताओं के भेद में फर्क पड़ जाता है। एक डाक्टर के लिए माटरकार आवश्यक मालूम पड़ती है क्योंकि उसकी सहायता से वह कम समय में बहुत से मरीजों को देव सकता है, लेकिन फालेज के प्राफेसर के लिए माटरकार आराम या विलासिता की ही वस्तु समझी जावेगी। अमोर आदमी व लिए महल, बिजली के लेम्प इत्यादि आराम की वस्तुएँ हों, लेकिन एक गरीब किसान के लिए ये वस्तुएँ एकदम विलासिता की वस्तुएँ समझी जावेंगी।

आवश्यकता की पूर्ति (Satisfaction of want)

अब प्रश्न उठता है कि आवश्यकता पूरी किस प्रकार की जाती है। यह तो सबका मालूम है कि हर आदमी पहले अपने खाने-पाने का वस्तुएँ खरीदता है। अर्थशास्त्र के नियमों के अनुगमन भी यहाँ नतीजा निकलता है कि मनुष्य अधिकतर जीवन-रक्षक वस्तुओं का उपयोग करें और आराम व विलासिता की चीजों का उपयोग करने में रुपया-पैसा की विज्ञान खर्च न करे। परन्तु इस बात पर हम बाद में ख्याल करेंगे। यहाँ पर पहले यह जानना आवश्यक है कि बहुत सी आवश्यकताओं को तो आदमी साधे सीधे पूरा कर लेता है। मान लिया आपको पानी पीना है। आप नदी या तालाब पर जाकर पानी पी लेते हैं। अगर आपको जाड़े के दिन में नहाने के लिए गरम पानी करना है तो आप बटनोई में पानी भर कर आग पर चढ़ा देते हैं, जब कोद आवश्यकता साधे-साधे पूरी की जाती है तो किसी मन्वृत्ति का उपयोग साधे-साधे किया जाता है। जैसे यहाँ पर बटनोई ने काम लिया गया था। परन्तु अधिकतर आवश्यकता पूर्ति के लिए पहले रुपय-पैसे कमाए जाते हैं और तब उन दरयों से आवश्यक वस्तु माली जाती है। बटनोई, लोहा, मंत्र आदि चीजें बनाकर बेचता है, लोहार प्राल, खुपा, फावड़ा वगैरह लोहे के सामान बनाता है। इन वस्तुओं को बेचने में तो पैसे बटनोई या लोहार को मिलते हैं उनमें वे अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए जरूरी वस्तुएँ खरीदते हैं। कहने का मतलब यह है कि आवश्यकताओं के पूरा करने के प्रश्न की जगह हमें यह सोचना चाहिए कि कोई मनुष्य अपनी आमदनी के रुपय-पैसों को किस प्रकार खर्च करता है तथा खर्च करने का कौन सा तरीका सबसे उत्तम होगा।

आय-व्यय (Income and Expenditure)

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है जीवन-रक्षक पदार्थ तो सब लोगों को सेवन करना चाहिए। इन पर किया गया खर्च हमेशा है। आराम की वस्तुओं पर किया गया खर्च

कार्य-क्षमता बढ़ती है। लेकिन ऐशो आराम और विलासिता की वस्तुओं पर तथा मादक वस्तुओं पर किया गया खर्च अस्मर किञ्चनपूर्वक म समझा जाता है। लेकिन सबसे बड़ी कठिनाई तो यह है कि आमतौर पर यह नहीं कहा जा सकता कि कौन सी वस्तु जीवन-रक्षक है, कौन सी आराम की और कौन सी चीज़ विलासिता की है। क्योंकि मनुष्य की प्रकृति, आदत, पैशन व समय के मुताबिक एक वस्तु आवश्यक भी हो सकती है और आराम व विलासिता की सामग्री भी बन सकती है। तब भी अगर कोई किमान एक घड़ी परीदे तो उसका यह खर्च किञ्चलपूर्वक में गिना जायगा। लेकिन यदि एक बिगार्थी घड़ी परीदता है तो शायद उसकी परीद न्यायपूर्ण मानो जा सकती है। हमारा गरीब मीनल किमान अगर अपने और अपने बच्चों को भूखा रख कर या कर्ज लेकर घड़ी परीदता है तो वह जरूर विलासिता की चीज़ परीदता है। क्योंकि उसी रुपये में वह ऐसी वस्तुएँ मोव ले सकता था जिसमें उसे अधिक उपयोगिता प्राप्त होती। मान लानिए यह घड़ी की जगह खाने के लिए चना और जवा परीदता तो इसमें वह अपना व अपने बच्चों का पेट भर सकता था। पर भरे रहने पर यह मेहनत करके कुछ कमा सकता था। लेकिन अगर कोई अमीर मनुष्य ऐसा करे तो वह किञ्चन खर्च नहीं कहलाएगी। क्योंकि उसके पास इतना रुपया रहना है कि वह अपनी जरूरी आवश्यकताओं को अच्छा तरह पूरी कर सकता है।

कहा जाता है कि जीवन रक्षा सम्म वा आवश्यकताएँ गिनी गिनाइ है और यदि उन्हीं को पूरा करने पर अधि जेरे डाला जायगा तो मनुष्य को अधिक उपयोग नहीं करना पड़ेगा। और मनुष्य जाति अस्म्य बन जायगी। अधिक सम्म बनने के लिए यह आवश्यक है कि हम नद नालों का प्राविष्कार करें और नद नद वस्तुएँ बनाएँ, जमे रेडियो, टेलीफोन, हवाई जहाज। यह मानी हुई बात है कि ये सब विलासिता की चीज़ें हैं। अतएव हमको विलासिता की वस्तुओं का उपभोग करना चाहिए। लेकिन हमारे गरीब भारत के लिए यह बात बहाँ तक ठीक है? हमारे किसानों की क्या हालत है? क्या उन्हें जीवन-रक्षक पदार्थ ही प्राप्त हैं? अदान लगाया गया है कि जेन क अदर पैदियों को जो भोजन मिलता है वह भी राहर व अत्रिकाथ मनुष्यों

को नसीब नहीं होना । ऐसी हालत में विनासिता की वस्तुओं पर किया गया खर्च निरकुल निरूल है ।

इसके अलावा हम यता चुके हैं कि हमारे मनदूर और छाटे शिल्पर अपनी आमदनी का अधिकांश भाग तम्बाकू, शराब, अफीम इत्यादि मादक वस्तुओं के सेवन में उड़ा देते हैं । एसा हालत में हमारे पचो का कहीं से भी दूब भिना सकता है जिसमें वे भविष्य में तदुक्त और कार्य कुशल वा । ता फिर धन को किस प्रकार में खच करना चाहिए ? उत्तर है इस तरह में जिससे न कवन हमको अधिक से अधिक सुख मिले बल्कि जिससे देश में रहने वाले ज्यादा-से ज्यादा जनसमुदाय को जीवन-रक्षक वस्तुएँ मिलें । जब तक यह हालत न हो जाय तब तक आराम व विनासिता का वस्तुओं को खरीदना निरूलखर्चों में गिना जाना चाहिए । इतने बाद जब इन चीजों की भी चारी आवे तब ऐसी वस्तुओं का उपभोग न करना चाहिये जिनमें थोड़ी देर के आनन्द के सिवा और कुछ न मिले, जैसे नाच, गेल-तमाशा, आतिशबाजी । इनमें तो जो मामूली उतके बनाने में लगाई जाती है वह मिनटों में खन कर खाक हो जाती है अर्थात् देश का उतना धन नष्ट हो जाता है ।

बचत (Saving)

एक बात और । क्या मनुष्य को अपनी आमदनी का एक भाग भविष्य के लिए निकाल कर अलग नहीं रख देना चाहिए ? कौन जानता है कि जो मनुष्य आज सम्पन्नशाली है वह भविष्य में भी वैसा ही बना रहेगा ? कितनी बार अचानक ऐसे कारण आकर उपस्थित हो जाते हैं कि लगभग मनुष्य भी रोटियों का माहताप हो जाते हैं । इसके अनाया जब आदमी बुढ़ा हो जाता है या चारपाइ पकड़ लेता है तब अपनी निदगी को पुराने ही तरीके में बिताने के लिए उससे पहले में बचत बचाने पड़ते हैं । इसके अलावा बहुत से सज्जन अपने पुरों को पटा कर कमाया धन्य बनाना चाहते हैं और पढ़ाई के लिए उन्हें पैसा सचय करना पड़ता है । बहुत से मनुष्य अपनी मृत्यु के बाद लड़कों को कुछ धन-दौलत छोड़ जाना चाहते हैं । कुछ आदमी बाद में तीर्थ-यात्रा करना चाहते हैं । किन्तु तो धन-पुरण के लिए

धन इकट्ठा करना चाहते हैं। इन सब बातों के लिए धन इकट्ठा करना अर्थात् बचाना पड़ता है। बचाव हुई रकम बचत कहलाती है।

बचत भित्तिनी करनी चाहिए और कैसे? इस सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य यह बात है कि भविष्य के महत्त्व के बारे में आदमी आदमी की राय में फर्क रहता है। कोई भविष्य को मानते हैं नहीं। उनका उद्देश्य खा चाट सब बराबर कर देना रहता है क्योंकि कौन जानता है कि क्या यमदेव का बुलावा आ पहुँचे। परन्तु ऐसे लोग अपनी आय का अधिकांश भाग थोड़ी देर तक मना देने वाली चीजों पर खर्च करते हैं। लेकिन जो दूर देश होते हैं वे ऐसे खर्च की ताकत पर खर्च कर रुपये को भविष्य के लिए बचा लेते हैं।

परन्तु बचाना कैसे चाहिये? क्या यह सब से अच्छा होगा कि रुपए को या उन रुपयों से सोना चाँदी मोज लेकर उनको घरती में गाड़ दें? हमारे भारत में गहनों के रूप में बहुत सा धन बेकार पड़ा हुआ है। और चूँकि यहाँ पर हर एक आदमी की इतनी भी आमदनी नहीं है कि वह जीवन रत्नक पदार्थ भी प्राप्त कर सकें, इस बात की बड़ी ज़रूरत है कि बचत की रकम ऐसे काम में लगाई जाय जिससे देश की पूँजी बढे। लेकिन यह तो बहुत दूर की बात है। आप यों ही देखिए। बचत के रुपयों को गहने के रूप में रखने से आपको उस रकम पर कोई सूद तक नहीं मिलता। इस तरह से रकम रखी और गाड़ कर रुपया पैसा रखने में कोई अधिक फर्क नहीं मालूम पड़ना और यह सच है कि यह तरीका ठीक नहीं। अस्तु सब से अच्छा तरीका तो यह होगा कि जैसे जैसे बचत होती जाय वह बैंकघर या किसी अच्छे बैंक के सेविंग बैंक के हिसाब में जमा कर दा जाय। इससे कुछ सूद मिलने के अलावा रुपया सुरक्षित रहता है। दूसरा तरीका, जमीन खरीदना या मकान बनवाना है। इससे भी रकम सुरक्षित रहती है और आमदनी अच्छी होती है। कुछ मनुष्य अपने बुनापे के लिए अथवा अपने सहारे रहने वाले आदमियों को मदद करने के लिए जीवन बीमा करवा लेते हैं। इसके लिए कुछ साल तक हर-सान एक निश्चित रकम बीमा कम्पनी को देनी पड़ती है।

अवधि न्यून हो जाने पर वामा का रक्त बीमा करने वाले बुद्धों को या उसकी भृत्य पर उसके आश्रितों को मिन जाती है ।

कहा जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति को निम्न अन्न और कपड़े लच्छे का दुन नहीं है अपना आय में से कम से कम दसवाँ हिस्सा हर सल बचाने का हठ प्रयत्न करना चाहिए । यदि वह ऐसा करने में सफल होगा तो इस बचत की वजह से मुसावन क पुरे दिनों में कजशाह हाने से बच जायगा और हमेशा सुखा बना रहेगा ।

अभ्यास के प्रश्न

१—उपमांग की परिभाषा लिखिए और उसका महत्त्व समझाइये ।

२—आवश्यकताओं का विवरण लिखिये और उन पर नियन्त्रण का जरूरत समझाइये ।

३—आवश्यक वस्तुओं के भेद उदाहरणों सहित समझाइये । अपने निपुणतादायक आवश्यक पदार्थ और कृत्रिम आवश्यक पदार्थों की सूची दीजिए ।

४—आराम का वस्तुएँ और विनाशिता कि वस्तुओं के भेद बतलाइय । किधी किमान की विनाशिता की वस्तुओं की सूची तैयार कीजिये ।

५—भादक वस्तुओं के उपभोग से क्या हानियाँ होती हैं ?

६—गाँवों में तम्बाकू का उपभोग बहुत होता है । क्या आर इसे अन्धा समझते हैं ?

७—कुछ स्थानों में धाय का उपभोग बट रहा है । क्या इसका प्रचार करना आवश्यक है ?

८—विद्व कीनिये कि सदा जीवन और उच्च विचार ही आर्थिक दृष्टि त मा सर्वोत्तम ध्येय है ।

९—विना आमदनी के बचाए सतों की मात्रा-कैसे बढ़ाई जा सकता है ?

१०—बचत में बचत की आवश्यकता समझाइये । साधारण परिस्थिति के व्यक्तियों का कम से कम प्रतिमास कितनी बचत करनी चाहिए ?

११—आर्थिक दृष्टि ने दानधम का सर्वोत्तम प्रणाली कौन सा है ? भारत में इस प्रणाली के अनुसार दान कहाँ तक होता है ?

१२—अपनी बचत के धन से सोने-चादी के गहना बनवा लेना कहीं तक उचित है ?

सातवें अध्याय

भारतीय रहन-सहन का दर्जा

रहन-सहन का दर्जा (Standard of Living)

विद्युत् के अध्याय में हम देख चुके हैं कि मनुष्य की आवश्यकताएँ अपरिमित होती हैं। फिर भी आदमी अपनी आमदनी अपनी दशा और परिस्थिति व अनुसार कुछ वस्तुओं का उपभोग करने लगता है। इन चीजों का उपभोग का जो ढर्रा पड़ जाता है वह बहुत कम बदलता है और यदि बदलता है तो बहुत धीरे धीरे। जितनी आमदनी होगी उतना ही खर्च भी किया जा सकेगा। आमतौर पर एक ही आमदनी वाले मनुष्य या परिवार करीब करीब एक ही समान रहते हैं। अर्थात् उनका रहन सहन का दर्जा एक सा ही होता है। और जैसे जैसे आमदनी में कमी बेशी होगी वैसे ही वैसे रहन सहन के दर्जा में भिन्नता पाई जाती है। यों तो एक तरह से प्रत्येक मनुष्य अथवा प्रत्येक परिवार एक दूसरे से सभी बातों में कभी भी मिलता जुलता नहीं है, इसलिये जितने परिवार हैं उतने रहन सहन के दर्जे हो सकते हैं। लेकिन साधारणतः रहन सहन के दृष्टि चार भागों में बाँटे जाते हैं। पहले दर्जे में वे लोग शामिल रहते हैं जिन्हें जीवन-रक्षक पदार्थ भी प्राप्त नहीं होते तथा जिन्हें कई कई दिन तक उपवास करना पड़ता है। इस दर्जे के मनुष्य भीतर मरते हैं और कर्म भी लेते हैं। इन्हें दरिद्र कहा जाय तो गलत न होगा। हमारे गरीब मजदूर व किसान इसी दर्जे में रखे जा सकते हैं। दूसरा दर्जा उन लोगों का है जिन्हें जीवा रक्षा सम्यग्धी साधारण पदार्थ ही प्राप्त हो सकते हैं। दोना वरु रुखा-भूषा भोजन लाना, फटा पुराना कपड़ा पहनना व दूटे-फूटे मकान में रहना ही इन लोगों का काम रहता है। तीसरे दर्जे वाले मनुष्यों की जीवन-रक्षक वस्तुओं के अभाव

आराम की भी वस्तुएँ मिल जाती हैं। दफ़्तरों में काम करने वाले हमारे हेडक्वार्टर्स साहब खूब अच्छा खाना खाते हैं, साफ़ सुयरा कपड़ा पहनते हैं तथा खुले हुए हवादार मकान में रहते हैं। ये आराम की वस्तुओं का भी सेवन करते हैं। चौथे दर्जे में रईस और अमीर, आदमी आते हैं निन्हे पास घन की कमी नहीं रहती। वे जो चाहे इरीद सकते हैं। उनका जीवन पूरी तरह से विनाशिता पूर्ण होता है। परन्तु यह काह जरूरी नहीं कि जो लखरती है उसने रहन-सहन का दर्जा सब में ऊँचा हो। अगर रईस मनुष्य का स्वास्थ्य खराब रहता है और उसे कोई चोज़ नहीं पचती, ता उसका रहन-सहन मुल देने लायक नहीं होगा। इसी तरह से आदमियों का ऐसा राग बरूड़ लेता है कि उसका असर उसका रहन सहन पर बहुत पड़ता है। मेवालाल की अँतें खराब हो, हीरा बहरा हो, प्रेम की अँतों में कड़े पड़ गये हों तो ये लोग उपभोग की चीजों से पूरापूर सतोप और आनन्द नहीं उठा सकते। इसी तरह बहुत से तन्दुरुस्त और तगड़े आदमी शराब, ताड़ी बगैरह पीकर या अनाप शनाप खा कर या बुरी साहबत में पड़ जाने व कारण अपने को परबाद कर देते हैं। फलस्वरूप उनका रहन सहन का दर्जा गिर जाता है।

भारतीय रहन-सहन का दर्जा

ऊपर बताई बातें हमारे भारत पर कुछ लागू होती हैं। यहाँ पर पहले तो आमदना की कमी है, अदाजा लगाया गया है कि हिन्दुस्तान के राजा महाराजा, सेठ साहूकार, रईस बगैरह का मिलाकर भी हर एक भारतीय की दैनिक आमदनी का औसत छै सात पैसे पड़ता है। इसका अलावा उपभोग की भी कमा मालूम पड़ती है। सरकार की ओर से यह कहा जाता है कि हिन्दुस्तानियों का रहन-सहन का दर्जा बढ़ता जा रहा है, क्योंकि पहले यहाँ आराम की जितनी सामग्री आती थी उनसे कहीं अधिक वस्तुएँ आजकल आती हैं। देहातों में पक्क मकान बनने जाते हैं। सिगरेट का प्रचार बहुत अधिक हो गया है। चाय और सिगरेट की खपत अधिक हो गई है, इत्यादि। परन्तु इस तरह कहने वाले एक बात मूल ज्ञाते हैं कि यह मनुष्य की स्वाभाविक आदत है कि वह भोगविलास के पदार्थों का सेवन चाँता

किस प्रकार खर्च करता है। रहन-सहन का दर्जा निश्चय करने के लिए मनुष्यों के आय-व्यय का अध्ययन करना अनिवार्य है। अंग्रेजी में आय-व्यय सम्बन्धी लेखों को बजट कहते हैं। इस शब्द का अब हिन्दी में भी प्रयोग होने लग गया है। कियों मनुष्य या परिवार के बजट के अदर यह देखा जाता है कि उस परिवार में कितने मनुष्य हैं, कितने कमाइ करते हैं, वे कैसे मकान में रहते हैं, उनकी उम्र, योग्य, शिक्षा आदि क्या है? परिवार की होने वाली आय क्या है, वह किस प्रकार खर्च की जाती है? अन्त में कुछ बचत भी होती है अथवा परिवार वालों को कर्ज लेना पड़ता है? रहन-सहन का दर्जा निश्चय करने के लिए व्यय सम्बन्धी श्रद्धों से बड़ी सहायता मिलती है।

पारिवारिक बजट से केवल रहन-सहन का दर्जा ही नहीं निश्चित होता। इसका अर्थ महत्त्व भी है। उनमें से दो का उल्लेख किया जाता है। प्रथम, पारिवारिक बजट को ठीक से इकट्ठा करने पर यह मालूम किया जा सकता है कि परिवार का व्यय अनावश्यक मामों में व्यय तो नहीं हो रहा है। उदाहरणार्थ आजकल के जमाने में यह संभव है कि किसी परिवार में अच्छा भोजन न किया जाता हो और बीमारी पर अधिक खर्च होना हो। इन बातों का पता लगाने से सरकार शिक्षा द्वारा जानता की आदत सुधारने का प्रयत्न कर सकती है। द्वितीय, यदि पारिवारिक बजट ऐसा हो कि उससे मालूम पड़ जाय कि पारिवारिक आय बिन बिन वस्तुओं की खरीद में खर्च की गई तो सरकार तथा उत्पादक उन वस्तुओं की उत्पत्ति करने का प्रयत्न करेंगे। भारत की आर्थिक उन्नति हो रहा है। भाँति भाँति क उद्योग धर्म खोले जा रहे हैं। कृषि उद्योगों की उत्पत्ति घटाई घटाई जा रही है। यह प्रश्न उठता है कि कौन से उद्योग बचे खोले जायें? किस वस्तु की उत्पत्ति नहीं कर बटाई जाय? यदि पारिवारिक बजट का उपयुक्त आकड़े प्राप्त हो तो इन प्रश्नों का उत्तर दिया जा सकता है।

विभिन्न व्यय सम्बन्धी श्रद्धों के अध्ययन करने से यह निश्चय हुआ है कि जिस दर से एक कुटुम्ब की आमदनी बढ़ती है, भोजन का व्यय उसी दर से नहीं बढ़ता। लेकिन वस्तु मकान माँड़े का खर्च उसी दर से

बढ़ता है। शिक्षा, स्वास्थ्य और मनोरञ्जन की सामग्री के खर्च की वृद्धि का दर आमदनी की वृद्धि की दर से अधिक बढ़ जाता है। जर्मन निवासी डाक्टर ए. जिल हजारों परिवार के बजट को देखा कर इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि कम आमदनी वाले परिवार का अधिकांश भाग जीवन निवाह में खर्च हो जाता है। लेकिन बस्त्र पर प्रत्येक परिवार में प्रतिशत खर्च लगभग बराबर होता है अर्थात् यदि पचास रुपये आमदनी वाले का बस्त्र में फटीय आठ रुपये खर्च होते हैं तो सौ रुपये आमदनी वाले का सोलह और हजार रुपये आमदनी वाले का फटीय एक सौ आठ रुपये खर्च होता है। इसी तरह किसानों में, रेशमी और धान में भी प्रत्येक परिवार में प्रतिशत खर्च बराबर होता है। लेकिन यह बात जल्द है कि अधिक आमदनी वाले परिवार की शिक्षा, स्वास्थ्य रक्षा इत्यादि में प्रतिशत खर्च बढ़ जाता है।

किसान का खर्च

ऊपर कही बातों को और स्पष्ट करने के लिए दो-तीन परिवारों के बजट का विवेचन करना आवश्यक मालूम पड़ता है। श्रीर चूँकि मास्तवर्ष कृषि प्रधान देश है इसलिए पहले किसानों की आर ही दृष्टि डालना उचित जान पड़ता है। यों तो आपको सुखी किसान या शायद कहीं कहीं मिल जायेंगे। हमने उनसे अधिक मतलब नहीं क्योंकि उनका सख्या बहुत कम है। अस्तु भारतीय किसान के रहन-सहन का दाना बिल्कुल नीचा है। उनके कुटुम्ब की मासिक आमदनी पंद्रह रुपये से कम ही रहती है। यह पता लगाया गया है कि संयुक्त प्रांत में किसानों की धार्मिक आमदनी सत्तर से नब्बे रुपये के बीच रहता है। इसी से हम इनके रहन-सहन के दर्जे का अनुमान लगा सकते हैं। इन बेचारों को साल भर हमेशा दोना बक रूखा सुखा भोजन भी नहीं मिलता। पहनने का कपड़ा बहुत ही मामूली, पग और मैना रहता है। अक्सर ये लोग एक साधारण छप्पर में ही गुजर करते हैं। अधिकतर यह पाया-गया है कि जो परिवार बहुत गरीब होता है उसमें जनसंख्या बहुत अधिक होती है। इन गरीबों के बच्चे खाली एक-कपड़ पहिने या कमी कमी नंगे ही घूमा करते हैं। इन बच्चों की दोनों ~~...~~

घी या अच्छा खाना तक नहीं मिलता। उनकी पढाइ लित्ताइ की तो कोई परवाह ही नहीं करता। भारत में शायद ही कोई किसान ऐसा होगा जो कजदार न हो। किसी का तो यह मत है कि वह कज लेकर पृथ्वी पर आता है, जिन्दगी भर महाजन के यहाँ रुपया भरता है और अन्त में कर्न छोड़ कर ही मर जाता है। बिना कर्न के तो इनका काम ही नहीं चलता। बीज, पशु, औजार या ब्याइ शादी को तो छोड़ दीजिए, बेचारा किसान अपने रोज के खर्च के लिए भी कर्न लेता है। उसने सरकारी लगान भी देना पड़ता है। इसी में उसकी आमदनी का काफी बड़ा हिस्सा निकल जाता है। फिर कर्न की रकम को कौन बड़े वह उसका खर्च तक नहीं चुका पाता।

नीचे एक गरीब और एक मामूली किसान के सालाना पारिवारिक खर्च का ब्यौरा दिखाया गया है —

	मामूली किसान का खर्च (रुपये में)	गरीब किसान का खर्च (रुपये में)
भोजन	६८	४६
कपड़ा	२१	१३
घर	१३	—
रोशनी व शकड़ी	५	५
दवा	१	२
शिक्षा	४	—
यात्रादानादि	१२	७
	१२४	७३

गराब किसान की वार्षिक आमदनी तिहत्तर रुपए थी। मामूली किसान की आमदनी एक सौ चौबीस रुपए थी। गरीब किसान का दया पर अधिक खर्च हुआ। मामूली किसान ने तो शिक्षा पर चार रुपए खर्च किए परन्तु गरीब किसान ने कुछ नहीं खर्च किया। गरीब किसान की आमदनी का ६०%

अथात् लगभग २/५ वा भाग भोजन पर खर्च हुआ परन्तु मामूली किसान ने खर्च लगभग आधी आमदनी भोजन पर खर्च की। दानो परिवारों की आमदनी का लगभग १६% अथात् छुट्टी भाग कपड़े पर खर्च हुआ। तान धम, यात्रादि पर भी दानो परिवारों ने अपनी आमदनी का लगभग उही भाग अथात् ६% खर्च किया। शिक्षा, दवा आदि की अपेक्षा तान धम, यात्रादि पर अधिक खर्च हुआ। इससे भारतीय किसानों की धार्मिक प्रवृत्ति का ज्ञान होता है।

गाँव के मजदूर और उनका खर्च

अतएव यह तो सिद्ध हो गया कि भारतीय किसान बड़े कष्ट और धम से अपना जीवन निवाह करता है। किसान का दूसरा भाइ है गाँव का मजदूर। कुछ मजदूरों का कहना है कि इनकी हालत तो किसानों से भी खराब है। किसान इन लोगों पर जमींदारी हुकुम चलाते हैं अथात् जैसे जमींदार किसानों से वेगार लेते हैं तथा उन्हें कष्ट पहुँचाते हैं, वैसे ही किसान लोग इन मजदूरों का साथ व्यवहार करते हैं। लेकिन ध्यान देने की बात तो यह है कि इससे और मजदूर का पारिवारिक व्यय से विशेष सम्बन्ध नहीं है पर यह जरूर है कि इससे मजदूरों का आय कम हो जाती है। मजदूरों और किसानों के बीच केवल एक फर्क पाया गया है और यह यह कि किसानों की आय प्रकृत के ऊपर निर्भर रहती है लेकिन मजदूरों की मजदूरी कुछ न कुछ नियमित होती है। परन्तु साचने लायक बात तो यह है कि अक्सर मजदूरों का हिस्सा बँव दिया जाता है। किसान के पास जो अनाज रहता है वह स्वयं उसका परिवार का लिए पशत नहीं होता। इसी में से उसकी मजदूर की मजदूरी देनी पड़ती है अतएव मजदूर को मजदूरी का रूप में कम से कम अनाज देने का प्रयत्न करता है। ऐसी दशा में मजदूर तो सचमुच किसानों से भी गए बीते बन जाते हैं तथा भी हम उन्हें बिना आषक गलती किए किसानों के रदन-सहन के रूप में रख सकते हैं।

गाँव के कारीगर का व्यय

भारतीय गाँवों में यदि किसी की हालत किसानों और मजदूरों से खराब
आ० अ० शा०—३

ही जा सकती है तो वह है गाँव के शिल्पी या कारीगर की हालत । न ता प्रकृति पर निर्भर रहता पड़ता है और न मन्दूरा की तरह उनकी खुटिया किमानों के हाथ दबी रहती है । यदि कहा जाय कि गाँव के कारीगर की मासिक आमदनी पन्द्रह रुपये के ऊपर पहुँच जाती है तो कोई गलत बात न होगी । बहुत से परिवारों के बजट को देखने के बाद पता चलता है कि या तो ये लोग भी पाने को चाते पर आधे से अधिक रकम उच कर देते हैं । रोशना और ईबन पर इनकी आमदनी का बीसवाँ हिस्सा खर्च होता है और कपड़े लत्त पर लगभग दस प्रतिशत । मकान का किराया, रोशनी और ईंधन के खर्च बराबर होता है । आमदनी का बचा हुआ पाँचवाँ भाग अथ वस्तुओं पर खर्च कर दिया जाता है । हलाकि धी दूब तो इन्हें भी नहीं क मारवा ही मिलता है । सफाई और रोशनी का भी इतना खर्च रहता है और किसानों की तरह इनमें भी शराब या ताड़ी पीने की बुरी आदत पाई जाती है । यह बात भी नहीं है कि ये कर्ज लेते हैं और सूद की दर तो हमेशों की तरह पन्द्रहतर अस्सी प्रतिशत सालाना से कम नहीं होता । शिक्षा और स्वास्थ्य के सम्बन्ध में ये लोग भी बहुत कम खर्च करते हैं ।

अभ्यास के प्रश्न

१—रहन-सहन के दर्जों का अन्तर्जा किन किन चीजों से लगाया जाता है ?

२—अपने गाँव के साधारण किसान की, रहन सहन के दर्जों की तुलना उसी गाँव के मजदूर की रहन सहन के दर्जों से कीजिए ।

३—अमार लोग किन वस्तुओं पर अपना रुखा अधिक खर्च करते हैं ?

४—अपने गाँव के कम से कम एक साधारण किसान, एक अमीर किसान और एक गरीब किसान के आय-व्यय का एक मास का हिसाब लगाइये और यह बतनाइये कि निम्नलिखित मदों पर कितना प्रतिशत खर्च प्रत्येक दर्जों के किसान ने किया —

(अ) भोजन (ब) कपड़ा (स) मकान भाड़ा (उ) शिक्षा (क) मुकदमेवाजी (ल) मादक वस्तु (ग) दानधन (घ) अन्य खर्च ।

५—किसी कुटुम्ब के मासिक आय-व्यय का हिसाब देव कर हम यह किस प्रकार बता सकते हैं कि व्यय श्रद्धे तरीके से किया जा रहा है या नहीं ?

६—रहन सहन का दत्ता लेंचा कर दन के क्या तराके हैं ? उनका उपयोग भारत में कहाँ तक किया जा रहा है ?

७—पारिवारिक आय व्यय रखने की आवश्यकता समझाइये ।

८—धन कुटुम्ब व मासिक व्यय की आलाचना कीजिये ।

९—यात्रा का रहन सहन क दत्त पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

१०—रहन सहन का दत्ता बटान में शिक्ता का महत्व समझाइये ।

११—रहन सहन के दत्त का अर्थ समझाइये । गाँवा में रहन सहन का दर्जा क्यों नीचा है ? उमे किस प्रकार लेंचा किया जा सकता है ?

आठवाँ अध्याय

भोजन कितना और कैसा हो ?

भोजन की आवश्यकता

अब तुम जान गए होंगे कि हमारी रहन-सहन में भोजन बड़े महत्व का स्थान रखता है । अतएव यह बहान नसी है कि हम यह जान लें कि हमको कैसा भोजन करना चाहिए । पहले यही बताइये कि आप भोजन क्यों करते हैं ? हम जो वस्तुएँ खाते हैं उनमें क्या मतलब निकलता है ? उत्तर में कहा जा सकता है कि हमें दो बातों की आवश्यकता रहता है एक तो गर्मी की और दूसरे चर्बी की । आप अभा दिनों दिन लम्बे चौड़े होते जा रहे हैं और आपका डोल डोल बढाने के लिए यह आवश्यक है कि आप खाना खावें । भोजन करने से कटीब पचीस साल की उम्र तक हमारे शरीर और दिमाग की वृद्धि होती है ताकि वे मजबूत बन सकें । दूसरे काम करने से शरीर और दिमाग में जा कमी होती है उसकी भी आहार से पूर्ति होती है । वा

वस्तु हम खाते है उनमें से कोई बदन को गम रगती है और किसी से गौरत बनता है। बदन को चगा रखने के लिये यह जरूरी है कि हम दोनों तरह की चीजें खाया करें। हमको जिनकी गौरत बनान बनी चीजों की जरूरत पड़ती है उससे चार गुना ज्यादा गर्म रखने बाजो चाना का है। अगर हम एक तरह का खाना जल्दत स ज्यादा खानें और दूसरी तरह का जरूरत से कम, तो हमारा पेट तो भर जायगा लेकिन हमारी तन्दुरुस्ता को नुकसान पहुँचेगा।

चर्बी, प्रोटीन (Protein), चीनी और विटामिन (Bitamin)

ऊपर बनावे हुए बातों से यह ता दार हो जाता है कि हमका खास खास वस्तुएँ खानो चाहिये परन्तु अब यह कैसे समझा जाय कि कौन कौन सी चीजें अरुण खानी चाहिए और कितनी। इसक पहले यह बताना जरूरी है कि प्रत्येक भोजन की वस्तु से हमको तान पदार्थ मिलते हैं चर्बी, प्रोटीन और चीनी। दही, घी, मक्खन तथा नारियल व तेल आदि में चर्बी की मात्रा अधिक होती है। प्रोटीन एक पदार्थ का अमेजी नाम है। मिच, बदांम, मूँगफनी, दाल, सूजी, बिना कूटे व पालिस किए हुए चावल और गौरत में प्रोटीन काफी होती है। इसी तरह शकर, शहद, गन्ना, आटा, चावल, जौ व मुख्य बौरत में चीनी बहुत होती है। चर्बी, प्रोटीन और चीनी व अलावा हमको विटामिन नाम के एक तत्व की आवश्यकता पड़ती है। विटामिन कई तरह के होते हैं जैसे विटामिन A, विटामिन B, विटामिन C, विटामिन D इत्यादि। हमको इनकी भी आवश्यकता पड़ता है। दूध और पनी में पानी की मात्रा अधिक होती है, चर्बी, प्रोटीन व चीनी कम रहती है। लेकिन तब भी उनकी कदर इसी लिये की जाती है कि उनमें विटामिन होता है। गाय के दूध में ऊपर बनावे चारों विटामिन होते हैं लेकिन विटामिन A सबसे अधिक होता है। यह जरूरी नहीं कि हर एक चीज में ये चारे विटामिन हो जैसे मिच, चाय, कदवा में विटामिन होता ही नहीं। गोभी, टमाटर आदि में पहले तीन विटामिन खूब होते हैं। पलो. में विटामिन C की अधिकता रहती है।

मोहन के भेद

अस्तु, आत्रेय के प्रचलित मोहन तीन हिस्सों में बाँटे जा सकते हैं — फल, अन्न और मग्न। फल का आहार सबसे अग्र सम्भ्रा जाता है। फलों के ऊपर रहने वाले प्रकृति देवों के पशु-पक्षी कितने सुन्दर, मा म हक, रग-विरगे और मनुष्य बट वाले होते हैं। यारप के विद्वानों ने यह हूँठ निष्कला है कि फलों में एक तरह का विषालो होता है जिससे शरीर अच्छी तरह गठ जाता है। फलों के बाद अन्न का नम्बर आता है। रोटा, दान, भात इन सब की गिनता अन्न में की जाती है। अन्न जितना सादा होता है उतना ही अच्छा होता है। हमारे पूर्वजों का उद्देश्य रहता था 'सादा जीवन व ऊँचे विचार'। वो भजा तथा फायदा गेहूँ की चालियों में होता है वह गेहूँ में नहीं होता। गेहूँ में उतर कर गेहूँ का गुण होता है, उसके उतर कर पुड़ा का और अन्न में पकवानों का। आग जितना मोटा हो उतना ही अच्छा होता है। आत्रेय चर्की में सिमने वाले आटे को बहुत सी चीन गरमा के कारण जल जाता है। चावल के पकान में उमका पाना अर्थात् मॉड़ नहीं पकना चाहिए। पके हुये चावल में कुछ नर्दा होता, सब गुण वा मॉड़ में उतर आते हैं। इस लागे में कुटे हुए चावल खाने की आदत है। कुटने में चावल का बहुत सा अणु अलग हो जाता है। इसी तरह से दाल को उसके छिन्नक के साथ खाना चाहिये। मूँ की छिन्नकेदार दाल में जो गुण होता है वह घुला मूँग का दाल में बिलकुल नहीं रहता। सरकारियाँ मूँ व पट को साफ करना हैं। इसलिए हमारे मोहन में सरकारियों का होना बन्नी है। पेट के हाजमा को कभी बिगड़ने नहीं देनी। इसके अलावा इनमें विटामिन, A, B, C, खूब होने हैं। डाक्टर लोग अन्नाहार में दूर की आवश्यक बताते हैं और थोड़ा सा धा भी। मॉड़ खाने वाले के शरीर में अन्धर एक तरह का विष पैदा हो जाता है तथा मॉड़ाहारी का मन उतना बस में नहीं रहता। मूँग तथा पश्चिम के अन्य देशों में मॉड़ाहारी का नम्बर घटता जाता है और पचाहार और अन्नाहार करने वाले मनुष्य तादाद में बढ़ते

उपयुक्त भोजन की मात्रा

हमारे पुरखे पहले तो खाना खाते थे अथवा उँहोंने रोटी, दाल, भात, तरकारी, घी, दूध का जो सादा खाना ठीक किया था उसमें हमें सब चीजें मिल जाती हैं। रोटी और भात में चीनी की भरमार है, दाल और दूध से प्रोटीन मिलता है और अन्य पौष्टिक पदार्थ मिल जाते हैं। आप कहेंगे कि यह तो पुराने जमाने की बातें हैं। आपका भाषो राम पूछ सकता है कि क्या रोटी ज्यादा खाई जाय और दूसरी वस्तुएँ कम। श्याम कह सकता है कि मैं दूध तो खूब पिऊँगा मगर और चीजें केवल नाम करने को खा लूँगा। इसलिए यह जानना जरूरी है कि कौन सी वस्तु कितनी खानी चाहिए। रोटी या दूध से हमको जितनी चाहिए उतनी गोशत बनाने वाली चीज नहीं मिल सकती और शंकर, चावल, धो, मकान तो हमको सिर्फ गरम रख सकते हैं। जो लोग गोशत खाते हैं उनको तो गर्मी पैदा करने वाली और गोशत बनाने वाली चीजें उसी से मिल जाती हैं। मगर बहुत से लोग ऐसे हैं जो गोशत नहीं खाते। हि दुआँ में तो गोशत खाने का रिवाज कम है। उनको इसके बदले क्या खाना चाहिए? मूग, मटर, अरहर और इसी तरह की जितनी दालें हैं इन सब में गर्मी पैदा करने वाली और गोशत बनाने वाली दोनों तरह की चीजें होती हैं। सेर भर मास में गोशत बनाने वाली जितनी चीजें होती हैं उससे कहीं ज्यादा सेर भर दाल में होती है।

किसी ने सब कहा है हमारे अहार में मांस, मछली और अंडे रहने की बिल्कुल जरूरत नहीं है। हमें पचापन मात्रा में प्रतिदिन दू, दही, मट्ठा मिलना चाहिए। इसके अलावा हमारे भोजन में रोच कुछ न कुछ कच्चे (बिना आँच पर पकाए हुए) पदार्थों का रहना बहुत जरूरी है। इसके लिए हरा मटर, हरा चना, टमाटर, मूली, गाजर, ताजे पत्त, बेर, ककड़ी, खरबूजा, खट्टे व मीठे नाबू का रोज सेवन करना चाहिए। इससे स्वास्थ्य बनने के अलावा हमारी आसु भी बढ जाती है। हमारे भोजन में गुड़ और शंकर का रहना बिल्कुल आवश्यक नहीं है। इन्हें यदि थोडा सा प्याया जाय तो कोई हानि नहीं होती पर ज्यादा खाने से ये नुकसान पहुँचाते हैं। बाजार की मिठाइयाँ तो भूल कर भी नहीं खाना चाहिए। अस्तु दिवाय लगा

कर निकाला गया है कि स्वस्थ रहने के लिए एक युवा पुरुष को २४ घंटों में निम्नलिखित भोजन करना चाहिए —

घर का पीसा आटा ६ छटॉक, दाल १ छटॉक, चावल २ छटॉक, पी आधी छटॉक, तरकारी ६ छटॉक, पत्त ४ छटॉक, दूध आधा सेर और थोड़ा सा तमक, जा कि खाता पचाने के लिए बहुत जरूरी है ।

भोजन उसी समय करना चाहिए जब मूख भूख लगी हो । यह न होना चाहिए कि पकरी की तरह हर समय मुँह चलना रहे । यह उसी समय हो सकता है जब की बक से पाना रखा जाय । पाने के अलावा पानी पीना भी बहुत जरूरी है । लेकिन ध्यान रखना चाहिए कि पानी हमेशा खाना खाने के पटा आधा घण्टा बाद पिया जाय । यदि पाना पीने की इच्छा बहुत तेज हो तो खाने व साथ दा चार घूट पानी पी ले । चौपास घंटे में दा सेर व लगभग पाना जरूर पीना चाहिए । गर्मी के दिनों में पानी का मात्रा बढ़ा देना चाहिए ।

अभ्यास के प्रश्न

- १—एक युवा मनुष्य के लिए प्रति दिन कितना भोजन स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक है ?
- २—आपके भोजन में कौन सी बातों का किस परिमाण में होना आवश्यक है ?
- ३—किसानों और मज़दूरों के भोजन में किन बातों की कमी रहती है । यह बिना खर्च बचाये कैसे दूर की जा सकती है ?
- ४—शहर में रहने वाले और गावों में रहने वालों के भोजन में क्या अंतर रहता है ?
- ५—जीने जैसे आमदनी बढ़ने लगती है, भोजन में किस प्रकार का अंतर होना लगता है ?
- ६—प्रोटीन, चर्बी और विटामिन किन पदार्थों में अधिक होते हैं ?
- ७—भोजन में दूध, पत्त और हरी तरकारी का महत्व समझाइये ।
- ८—सात्विक भोजन के लिये किन वस्तुओं का उपभोग कितने परिमाण में करना चाहिये ?

६—तामसिक भोजन के पदार्थों की सूची दोजिये ।

१०—मानसिक परिश्रम के करने वाले व्यक्तियों को अपने भोजन में किन वस्तुओं का अधिक परिमाण में उपयोग करना चाहिये ?

नवौं अध्याय

विनिमय (Exchange)

वस्तुओं की बदला बदली (Barter)

लकड़ी वा काम करने वाले बटई को बिना मूल लिए खाने को अनाज नहीं मिल सकता । वह कुर्मी मेज़, लिडकी, हल, गाड़ी आदि बना कर बेचता है । बेचने से ना दाम आता है उससे मंडो में जाकर वह अनाज खीदता है । परन्तु क्या यह जरूरी है कि बटई माल को रुपये पैसे के बदले बेचे ? हमारे गाँव में अधिकतर यह होता है कि किसान अनाज देकर अपने मतलब की वस्तु दूसरे से ले लेते हैं । अगर रामू को एक जोड़ा घोती लेना होता है तो वह पन्द्रह बीस सेर अनाज देकर बाजार से उन घोती को ले लेता है । लोहार को जब अनाज की जरूरत पड़ती है तो वह किसी किसान को जिसे पावड़े आदि की जरूरत होती है वे औजार देकर अनाज ले लेता है । पुराने समय में रुपयापैसा ता चलता नहीं था । उस समय इसी तरह की बदला-बदली होती थी । हमारे गाँवों की तरह ही अफ्रीका, आस्ट्रेलिया आदि देशों के असभ्य जगली अब भी हाथी दाँत, गेद, मोम, शुतुमुर्ग के पर घगैरह देकर उनसे बदले में हथियार, औजार और खाने पीने की चीजें लते हैं ।

बदले के लिए कम से कम दो चीजें जरूर दरकार होती हैं । जब हम यह कहते हैं कि किसी का बदला हो सकता है, तो हमारा मननव यह रहता है कि उस चाज का बदला किसी और चीज से हो सकता है । लेकिन एक बात है । मान लो किसी बटई ने एक हल तैयार किया और वह उसके बदले

अनाज लेना चाहता है। पर अनाज पैदा करने वाले किसान को उस समय हल की दरकार नहीं है। या अगर उसे हल की जरूरत है तो हो सकता है कि वह उससे पहले बदले में देने के लिये काफी अनाज न हो। यह भी हो सकता है कि किसान हल की जगह अनाज को ज्यादा काम की वस्तु समझता हो और इस लिये वह हल की जगह अनाज न देना चाहता हो। ऐसा हालत में बेचारे बंदूक को किसी ऐसे किसान का दूधना पड़ेगा जिसे हल की जरूरत हो, जिसके पास अनाज भी काफी मात्रा में हो और जो हल को अनाज से अधिक उपयोगी समझता हो। अनाज बदलने से दोनों को लाभ होता है। किसान का अनाज का अपेक्षा अधिक काम का चीज मिल जाती है। इसी तरह बंदूक को भी हल के बदले अनाज मिल जाने से लाभ होता है। अगर बंदूक को ऐसा कोई किसान नहीं मिलेगा तो वह मूर्खो मरने लगेगा। और फिर अपनी अनाज से बंदूक का काम नहीं चलना। उसे निमक, मिर्च, तेल, खटाह आदि मोचादण्ड। मान लो उसे हल के बदले अनाज मिल भी गया तो उसे ऐसे आदिमियों की तनाश कानी पड़ेगी जानकर, मिर्च, मसाला आदि देकर अनाज ले ले। इसी तरह दूसरे पक्षे वालों को भी तग होना पड़ेगा क्योंकि सब का चीजें बदलने की जरूरत होती है। लेकिन अगर इसी तरह सब लोग अनाज चीजें लेने वालों का पना लगाने लगे तो बहुत बड़े पैदा हो जाय। इन कठिनाइयों का दूर करने के लिये रुपये जैसे चलाए गए। और आजकल हमें जब किसी वस्तु की आवश्यकता पड़ती है तो हम बाजार जाकर उसे मोल लेते हैं। अर्थात् जिस मनुष्य के पास वह वस्तु रहती है उसे कुछ देने या रुपये देकर बदले में उस वस्तु का ले लते हैं। किसी वस्तु की बिक्री से सारीदने और बेचने वालों को लाभ ही होता है, नुकसान नहीं। सरीदार रुपये की जगह उस वस्तु को ज्यादा काम की समझता है और बेचने वाले को रुपये की जरूरत रहती है।

माल की खरीद और बिक्री (Sale and Purchase)

हम किस मनुष्य के पास से चीज मोल लेते हैं वह सौदागर या व्यापारी कहलाता है लेकिन सौदागर और व्यापारी में एक फर्क रहता है। व्यापारी को माल खरीदता है और जरूरत के मुताबिक बेचता है। सौदागर

व्यापारियों से माल खरीद कर खाने या उपभोग करने वालों के हाथ बेचता है। व्यापारी एक फसल को एक जगह इकट्ठा करता है फिर उनको साफ कराकर पुष्टकर बेचने वालों के हाथ बेच देता है। व्यापारी कम से कम दामों में अनाज को मोल लेकर अधिक दाम पर बेचता है। किसान फसल तैयार होते ही बेच देते हैं। उस समय अनाज का भाव सस्ता रहता है। किसानों का यह विचार नहीं होता कि अगर अनाज रक्खा रहेगा तो आगे चल कर उससे काफी लाभ होगा। लेकिन दरअसल बात तो यह है कि हमारे किसानों की हालत ऐसी बुरी है और वे इतने कष्टदार रहते हैं कि वे अनाज का घर में रख नहीं सकते। व्यापारी उस सस्ते अनाज को मोल ले लेकर घड़े भर लेता है और जब भाव खूब तेज होता है तब उसे बेचता है।

फसल तैयार होने के समय तो किसान प्रायः सब अनाज बेच देते हैं। पर थोड़े दिन बाद उनकी रसद लुप्त जाती है। तब वे बनिप को शरणागत होते हैं। बनिप उस समय अनाज किसानों को बाँटता है और उनसे वादा कर लेता है कि फसल पर वे उसका संप्रदाय दे देंगे। इसी तरह बोवाई के समय वह किसानों को तेज भाव पर अनाज देता है। आप हिसाब लगा सकते हैं कि बानप को क्या लाभ होता है। मान लो फसल पर वह एक रुपये का बीस सेर गेहूँ खरीदता है। और बाद में आवश्यकता पड़ने पर वह पाँच सेर का अनाज बेचता है और वादा करा लेता है कि दूसरी फसल पर यात्रा सहित इन रुपये का अनाज लेगा। फसल पर छे सात महीने में व्याज सहित रुपये का फिर बीस सेर के भाव से गेहूँ ले लेता है। इस तरह एक हा साल में दोगुना फायदा उठाता है। फसल की बिक्री में लाभ-हानि, दर-संचर, तेजी मदी का ध्यान रखने से यहाँ लाभ होता है।

इस खरीद और बिक्री से बनिप व्यापारी का ही फायदा हाता है। बेचारे किसान का तो नुकसान ही रहता है। अगर उपज कम होती है तो किसानों को अधिक दाम तो मिलते नहीं। हाँ, बनिपाराम जरूरी माल को अधिक ऊँचे भाव पर बेचकर खरीदारों से ज्यादा फायदा उठा लेते हैं। किसानों को लाभ पहुँचाने के लिए, उन्हें इन बनिपों के हथकण्डे से बचाने